बड़े सवेरे बरगी कालोनी के लिए चल दिए। मेरी चाल अपने आप तेज हो गयी। उन दिनों मेरा बड़ा लड़का चि. शरद वहाँ रहता था। चंड सूर्य के प्रचंड ताप में उसके द्वार पर खड़े होकर कहा, 'भिक्षां देहि!'

यहाँ नर्मदा पर एक विशाल बाँध बन रहा है। शाम को उसे देखने गए। हजारों मजदूरों और सैकड़ों यंत्रों से यह स्थान जीवन्त हो उठा है। बाँध की दीवार बहुत-कुछ हो चुकी थी। एक सीढ़ी से अन्दर उतरे तो मैं चकित रह गया। बाँध की ठोस नजर आती दीवार में, इस छोर से उस छोर तक, बिजली की रोशनी से जगमगाती सुरंग थी! देख-रेख के लिए बड़े बाँध में ऐसी सुरंग रहती है, यह तभी जाना।

जब यह बाँध बन जाएगा, तो यहाँ का नक्शा ही बदल जायेगा। यहाँ एक विशाल झील बनेगी। मैं सोचने लगा, इस झील का नाम क्या होना चाहिए।

याद आया, कभी यहाँ एक स्त्री रहती थी। एक दिन उसने सुना, राम आ रहे हैं। स्वागत के लिए उसके पास बेर के सिवा और था ही क्या? राम आए तो चख-चख कर मीठे बेर देती रही! प्रेम में विह्वल शबरी को इस बात का ध्यान ही न रहा कि वह राम को जूठे बेर खिला रही है। सोचा, इसी प्रदेश की उस सरला आदिवासी नारी की याद में इस झील का नाम शबरी झील रखा जाय, तो क्या ही अच्छा हो!

शबरी के बेर, सुदामा के चावल, विदुर की भाजी! क्या इनका कोई मोल हो सकता है? महत्त्व इस बात का नहीं है कि क्या दे रहे हैं, महत्त्व इस बात का है जो हम दे रहे हैं उसमें अपना हृदय उड़ेल रहे हैं या नहीं।

यहाँ से पारा पास ही है, पर गाँव की गलियाँ भा गयीं, तो रात यहीं रह गए। भिनसारे चल दिए। आगे टेमर-संगम पड़ा! टेमर किस ठस्से के साथ नर्मदा से मिल रही थी! इस सूखे में भी उसमें पानी था। संगम में देर तक स्नान करते रहे। तभी आकाश में बादल घिर आए। बूँदाबाँदी होने लगी। मैं बहुत खुश हुआ। सोचा, आज त्रिवेणी-स्नान हुआ। दो धाराएँ पहले से थीं, तीसरी ऊपर से आ मिली!

जब से बरगी कॉलोनी से चले हैं, तब से एक नया दृश्य बराबर देखने मिल रहा है। बारूद से चट्टानें तोड़ी जा रही हैं, बड़ी-बड़ी नहरें खोदी जा रही हैं। बाँध के बन जाने पर ये नहरें खुशहाली की सौगात लाएँगी। सारा इलाका धन-धान्य से लहलहा उठेगा।

लेकिन परकम्मावासियों का क्या होगा? नदी के दोनों ओर जब इन नहरों का जाल दूर-दूर तक फैल जाएगा और उनमें नर्मदा जल प्रवाहित होगा, तब परकम्मावासी भारी धर्मसंकट में पड़ जायेंगे। इस नहरों को लाँघा जाये या नहीं? नहरों को लाँघना नर्मदा लाँघने जैसा होगा। नहीं लाँघने पर इतना बड़ा चक्कर लगाना पड़ेगा कि वह फिर नर्मदा परिक्रमा ही नहीं रहेगी। तब क्या किया जाय?

मेरा विचार है कि जब नर्मदा का स्वरूप बदलेगा, तब नर्मदा-परिक्रमा के नियमों का स्वरूप भी बदलेगा। नहर, नदी की दूसरी पीढ़ी हुई। छोटी नहरें, तीसरी पीढ़ी। परकम्मावासी की दायित्व नदी के प्रति है, उसकी दूसरी-तीसरी पीढ़ी के प्रति नहीं। इसलिए इन नहरों को लाँघने में कोई दोष नहीं।

रात खमरिया में रहे। यहाँ से सड़क मिल गयी। दोपहर को ग्वारीघाट (जबलपुर)आ गए। इस बार की यात्रा पूरी हुई। यात्रा का शुभारम्भ इसी ग्वारीघाट से हुआ था। उस तट से गए थे, इस तट से लौटे थे। लौटते समय सामने तट के गाँवों को देखते ही पूर्व-स्मृति के तार झनझना उठते। जिनके यहाँ ठहरे थे, उनकी याद आ जाती। खबर भिजवा देते, तो मिलने आ जाते। पाठा के शिक्षक, सहजपुरी के संन्यासी, छेवलिया का तुलाराम कोटवार, सभी प्रेम आये थे। तुलाराम तो स्त्री बच्चों को लेकर आया। सभी हमारे लिए सीधा लाये थे।

तो उस तट के पाठा, सहजपुरी, छेवलिया, बरहइयाखेड़ा; और इस तट के घाघी, झुरकी, बखारी, रोटो, पायली-तुम्हें जुहार! अब तो तुम थोड़े ही दिनों के मेहमान हो न? नर्मदा के लुभावने किनारो, तुम्हें भी अलविदा! और सौन्दर्य-सरिता नर्मदा! तुम्हें भी अलविदा, क्योंकि यहाँ तुम भी तो उस विशाल झील में उसी तरह खो जाओगी, जिस तरह दूध के बरतन में पड़ती धारोष्ण दूध की धार खो जाती है!

शब्दार्थ-टिप्पणी

सैलाव बाढ़ **निर्जला** बिना जल का **प्रपात** जल की धारा जो ऊँचे स्थान से गिरती हो **चटख** मसालेदार **बूँदाबाँदी** झरमर बारिश **चौबोला** एक प्रकार का मात्रिक छंद **तराशा** नकाशी **प्रागैतिहासिक** इतिहास के पहले का **उफनाती** प्रचंड वेग से **विशाद** दु:ख **सौगात** उपहार **मोल** कीमत

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) लेखक ने किस नदी के सौन्दर्य की बात की है ?

(2) अच्छा तैराक भी नर्मदा के अनजान पानी में क्यों नहीं उतरता ?

(3) बुजबुजिया गाँव क्यों हरा-भरा था ?

(4) घाघा में लेखक को कैसा अनुभव हुआ ?

(5) बुखारी में कुएँ में पानी क्यों नहीं था ?

(6) बरगी कॉलोनी से कैसा दृश्य देखने को मिला ?

(7) नर्मदा की यात्रा का शुभारंभ कहाँ से हुआ ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) छिंदवाड़ा के मजदूरों का वर्णन कीजिए।

(2) 'इन्सान की कुलहाड़ी ने कैसे सर्वनाश कर दिया' पाठ के आधार पर समझाइए।

(3) नर्मदा बाँध की वजह से किन लोगों ने अपना सब कुछ खो दिया ?

(4) लेखक ने नर्मदा के किनारेवाले गाँवों को थोड़े ही दिनों के मेहमान क्यों कहा ?

(5) नर्मदा परिक्रमा के नियमों का स्वरूप बदलेगा-ऐसा लेखक क्यों कहते हैं ?

3. मुहावरों का अर्थ समझाकर वाक्य प्रयोग कीजिए :

दलित द्राक्षा-सा रूप, काम तमाम होना

योग्यता- विस्तार

- 'महाभारत का नेवला सोने का हुआ' - प्रसंग पढ़िए।
- सरदार सरोवर की मुलाकात या प्रवास कीजिए।

•

17 दातव्य कौ अंग

वाजिदजी

(17वीं शताब्दी)

वाजिदजी का रचना-काल 17वीं शताब्दी माना जाता है। इनके विषय में केवल इतना प्रसिद्ध है कि यह जाति के पठान थे। एक दिन शिकार खेलने निकले, और एक हिरणी पर तीर चलाने ही वाले थे कि हृदय से करुणा का झरना फूट पड़ा। उसी क्षण तीर-कमान तोड़कर फेंक दिया और जीवन जीव-प्रेम की ओर मुड़ गया। सद्‌गुरु पाने के लिए व्याकुल हो उठे। खोजते-खोजते स्वामी दादूदयाल की अकुतो भय शरण पा ली और उनके कृपापात्र शिष्य हो गए। दादूदयालजी के 152 शिष्यों में वाजिदजी की गणना की जाती है।

कहते हैं कि छोटे-छोटे 14 ग्रंथों में इनकी संपूर्ण बानी है, लेकिन सब उपलब्ध नहीं है। 'अरिल' छंद में अनेक अंगों पर इन्होंने प्रसाद युक्त सरल-सरस रचनाएँ लिखी हैं। जीव-दया, उदारता तथा देह की अनित्यता पर इनके बड़े भावपूर्ण 'अरिल' हैं। इन्होंने दोहा और चोपाई में भी रचना की है।

'दातव्य को अंग' में दान की महिमा का वर्णन है। दीन-हीन व्यक्ति को उदार मन से अन्न-वस्त्र का दान ही सबसे बड़ा पुण्य और सच्ची हरि-भक्ति है। माँगने वाले को देखकर मुँह नहीं छिपाना चाहिए। कुछ देकर ही कुछ पाया जा सकता है, ऐसा कवि का दृढ़ विश्वास है।

भूखो दुर्बल देख नाहिं मुहँ मोड़िये।
जो हरि सारी देय तो आधी तोड़िये॥
दे आधी की आध अरध की कोर रे।
हरि हां, अन्न सरीखा पुण्य नाहिं कोइ ओर रे ॥ 1 ॥

खैर सरीखी और न दूजी वसत है।
मेल्हे वासण मांहि कहा मुहँ कसत है॥
तूँ जिन जानें जाय रहेगो ठाम रे।
हरि हाँ, माया दे वाजिद धणी के काम रे ॥ 2 ॥

मंगण आवत देख रहे मुहुँ गोय रे।
जद्यपि है बहु दाम काम नहिं लोय रे॥
भूखे भोजन दियो न नागा कापरा।
हरि हां, बिन दीया वाजिंद पावे कहा बापरा ॥ 3 ॥

शब्दार्थ-टिप्पणी

सारी पूरा,संपूर्ण **तोड़िये** तोड़कर या हिस्सा करके दे दे **कोर** टुकड़ा **खैर** खैरात **वसत** वस्तु **मेल्हे** रख देने पर **वासण** बर्तन **कसत है** बाँधता है **ठाम** मुद्रा, स्थान **माया** धन-संपत्ति **धणी** ईश्वर **मंगण** माँगने वाला **गोय** छिपाकर **नागा कापरा** नंगे को कपड़ा **बापरा** बेचारा, उपयोग करना

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) किसे देखकर मुँह नहीं छुपाना चाहिए ?
(2) वाजिद ने सबसे पुण्य कार्य किसे माना है ?
(3) ईश्वर से वाजिद धन-संपत्ति क्यों चाहते हैं ?
(4) 'मेल्हे वासण मांहि कहा मुँह कसत है' से क्या तात्पर्य है ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) कविता के आधार पर दान की महिमा का वर्णन कीजिए।
(2) ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

मंगण आवत देख रहे मुँहु गोय रे ।
जद्यपि है बहु दाम काम नहिं लोय रे ॥

योग्यता-विस्तार

- 'परोपकार' पर निबंध लिखिए ।

18 स्कंदगुप्त

जयशंकर प्रसाद

(जन्मः सन् 1889 ई; निधन:न् 1937 ई.)

छायावाद के उन्नायक जयशंकर प्रसाद का जन्म काशी के एक प्रतिष्ठित सुँघनी साहू परिवार में हुआ था। अल्पायु में ही माता-पिता का निधन हो जाने के कारण उनकी शिक्षा आठवीं कक्षा से आगे न बढ़ सकी। उन्होंने घर पर ही हिन्दी, उर्दू, फारसी और संस्कृत का अध्ययन किया। उन्हें साहित्य के साथ-साथ इतिहास, दर्शन, वेद, पुराण एवं उपनिषद आदि का गहरा ज्ञान था। इस दृष्टि से उनकी प्रतिभा बहुमुखी थी। प्रसादजी मूलतः तो कवि थे किंतु कहानी, नाटक, निबंध, उपन्यास जैसी अनेक विधाओं में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है।

'कामायनी' उनकी कीर्ति का प्रमुख स्तंभ है, एक सफल महाकाव्य है। इसके अलावा 'लहर', 'झरना', 'आँसू' उनकी श्रेष्ठ काव्य कृतियाँ हैं। उन्होंने 'कंकाल' और 'तितली' जैसे उपन्यास एवं 'आकाशदीप', 'इंद्रजाल','प्रतिध्वनि' जैसे कहानी संग्रह हिन्दी साहित्य को दिए। उन्होंने 'चन्द्रगुप्त', 'स्कंदगुप्त', 'ध्रुव स्वामिनी' जैसे ऐतिहासिक नाटक लिखकर हिन्दी नाटक को समृद्ध किया। उनकी रचनाशीलता में प्रेम, सौन्दर्य, भावुकता और कल्पना का स्वर मुखर है किंतु नाटक-कहानी-उपन्यास में यथार्थ के स्वर भी सुने जा सकते हैं। उनकी भाषा तत्सम् प्रधान और समास बहुल होती है।

प्रस्तुत नाटयांश प्रसादजी के सर्वश्रेष्ठ नाटक 'स्कंदगुप्त' के अंतिम अंक (पाँचवें अंक) से लिया गया है। इसमें कथा-नाटक स्कंदगुप्त के देशप्रेम, शौर्य और साहस, निर्भीकता-उदारता, त्याग और बलिदान का सफल चित्रण किया गया है। इस अंक में हम देखते हैं कि स्कंदगुप्त अपनी वीरता और पराक्रम से आक्रमणकारियों को पराजित कर संपूर्ण राज्य को निरापद एवं निष्कंटक बना देता है। निस्वार्थ स्कंदगुप्त विजया के प्रेम-प्रस्ताव को ठुकराकर अपने अनन्य त्याग का परिचय देता है। दूसरी ओर स्कंदगुप्त की प्रेयसी देवसेना देशप्रेम के लिए स्व-प्रेम की बलिदान चढ़ाकर बहुत बड़ा आदर्श प्रस्तुत करती है। वह विजयी स्कंदगुप्त को स्वीकार कर प्रतिदान लेने से इनकार कर देती है। देवसेना के अनन्य प्रेम से प्रभावित स्कंदगुप्त आजीवन अविवाहित रहने का संकल्प करता है।

देवसेना : संगीत-सभा की अन्तिम लहरदार और आश्रयहीन तान, धूपदान की एख क्षीक गन्ध-रेखा, कुचले हुए फूलों का म्लान सौरभ और उत्सव के पीछे का अवसाद, इन सबों की प्रतिकृति मेरा क्षुद्र नारी जीवन। मेरे प्रिय गान! अब क्या गाऊँ और क्या सुनाऊँ? इन बार-बार के गाये हुए गीतों में क्या आकर्षण है- क्या बल है जो खींचता है? केवल सुनने की ही नहीं, प्रत्युत इसके साथ अनन्तकाल तक कंठ मिला रखने की इच्छा जग जाती है।

शून्य गगन में खोजता जैसे चन्द्र निराश,
राका में रमणीय यह किसका मधुर प्रकाश?
हृदय! तू खोजता किसको? छिपा है कौन-सा तुझमें,
मचलता है, बता क्या दूँ? छिपा तुझसे न कुछ मुझमें।
रसनिधि में जीवन रहा, मिटी न फिर भी प्यास,
मुँह खोले मुक्तामयी सीपी स्वाती आस।
हृदय! तू है बना जलनिधि, लहरियाँ खेलती तुझमें,
मिला अब कौन-सा नवरत्न जो पहले न था तुझमें।

(प्रस्थान)

(वेश बदले हुए स्कंदगुप्त का प्रवेश)

स्कंदगुप्त : जननी! तुम्हारी पवित्र स्मृति को प्रणाम।
(समाधि के समीप घुटने टेककर फूल चढ़ाता है।)
माँ। अन्तिम बार आशीर्वाद नहीं मिला, इसी से यह कष्ट, यह अपमान। माँ तुम्हारी गोद में पलकर भी

तुम्हारी सेवा न कर सका, यह अपराध क्षमा करो।

(देवसेना का प्रवेश)

देवसेना : (पहचानती हुई) कौन? अरे! सम्राट की जय हो।

स्कंदगुप्त : देवसेना!

देवसेना : हाँ, राजाधिराज! धन्य भाग्य, आज दर्शन हुए।

स्कंदगुप्त : देवसेना! बड़ी-बड़ी कामनाएँ थीं।

देवसेना : सम्राट

स्कंदगुप्त : क्या तुमने यहाँ कोई कुटी बना ली है?

देवसेना : हाँ, यहाँ गाकर भीख माँगती हूँ, और आर्य पर्णदत्त के साथ रहती हुई महादेवी की समाधि परिष्कृत करती हूँ।

स्कंदगुप्त : मालवेश-कुमारी देवसेना! तुम और यह कर्म! समय-जो चाहे करा ले। कभी हमने भी तुम्हें अपने काम का बनाया था। देवसेना! यह सब मेरा प्रायश्चित है। आज मैं बन्धुवर्माव की आत्मा को क्या उत्तर दूँगा? जिसने नि:स्वार्थ भाव से सब कुछ मेरे चरणों में अर्पित कर दिया था, उससे कैसे उऋण होऊँगा? मैं यह सब देखता हूँ और जीता हूँ।

देवसेना : मैं अपने लिए ही नहीं माँगती देव! आर्य पर्णदत्त ने साम्राज्य के बिखरे हुए सब रत्न एकत्र किये हैं, वे सब निरवलम्ब हैं। किसी के पास टूटी हुई तलवार ही बची है, तो किसी के जीर्ण वस्त्रखंड। उन सबकी सेवा इसी आश्रम में होती है।

स्कंदगुप्त : वृद्ध पर्णदत्त, तात पर्णदत्त! तुम्हारी यह दशा? जिसके लोहे से आग बरसती थी, वह जंगल की लकड़ियाँ बटोरकर आग सुलगाता है। देवसेना! अब इसका कोई काम नहीं, चलो महादेवी की समाधि के सामने प्रतिश्रुत हो, हम-तुम अब अलग न होंगे। साम्राज्य तो नहीं है, मैं बचा हूँ, वह अपना ममत्व तुम्हें अर्पित करके उऋण होऊँगा, और एकांतवास करूँगा।

देवसेना : सो न होगा सम्राट! मैं दासी हूँ। मालव ने जो देश के लिए उत्सर्ग किया है, उसका प्रतिदान लेकर मृत आत्मा का अपमान न करूँगी। सम्राट, देखो, यहीं पर सती जयमाला की भी छोटी-सी समाधि है, उसके गौरव की रक्षा होनी चाहिए।

स्कंदगुप्त : देवसेना! बन्धुवर्मा की भी तो यही इच्छा थी।

देवसेना : परन्तु, क्षमा हो सम्राट! उस समय आप विजया का स्वप्न देखते थे, अब प्रतिदान लेकर मैं उस महत्व को कलंकित न करूँगी। मैं आजीवन दासी बनी रहूँगी, परन्तु आपके प्राप्य में भाग न लूँगी।

स्कंदगुप्त : देवसेना! एकांत में, किसी कानन के कोने में, तुमहें देखता हुआ जीवन व्यतीत करूँगा। साम्राज्य की इच्छा-एक बार कह दो।

देवसेना : तब तो और भी नहीं। मालव का महत्त्व तो रहेगा ही, परन्तु उसका उद्देश्य भी सफल होना चाहिए। आपको अकर्मण्य बनाने के लिए देवसेना जीवित न रहेगी। सम्राट, क्षमा हो। इस हृदय में....आह! कहना ही पड़ा, स्कंदगुप्त को छोड़कर न तो कोई दूसरा आया और न वह जाएगा। अभिमानी भक्त के समान निष्काम होकर मुझे उसी की उपासना करने दीजिए, उसे कामना के भँवर में फँसाकर कलुषित न कीजिए। नाथ! मैं आपकी ही हूँ, मैंने अपने को दे दिया है, अब उसके बदले कुछ लेना नहीं चाहती। (पैरों पर गिरती है।)

स्कंदगुप्त : (आँसू पोंछता हुआ)उठो देवसेना! तुम्हारी विजय हुई। आज से मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं कुमार-जीवन ही व्यतीत करूँगा। मेरी जननी की समाधि इसमें साक्षी है।

देवसेना : हैं, हैं, यह क्या किया?

स्कंदगुप्त : कल्याण का श्रीगणेश : यदि साम्राज्य का उद्धार कर सका, तो उसे पुरगुप्त के लिए निष्कंटक छोड़ जा

सकूँगा।

देवसेना : (निःश्वास लेकर) देवव्रत! तुम्हारी जय हो। जाऊँ आर्य पर्णदत्त को लिवा लाऊँ।(प्रस्थान)

(विजया का प्रवेश)

विजया : इतना रक्तपात और इतनी ममता, इतना मोह---जैसे सरस्वती के शोणित जल में इन्दीवर का विकास। इसी कारण अब मैं भी मरती हूँ। मेरे स्कंद प्राणाधार!

स्कंदगुप्त : (घूमकर)यह कौन, इन्द्रजाल मंत्र? अरे विजया!

विजया : हाँ, मैं ही हूँ।

स्कंदगुप्त : तुम कैसे?

विजया : तुम्हारे लिए मेरे अन्तस्तल की आशा जीवित है।

स्कंदगुप्त : नहीं विजया! उस खेल को खेलने की इच्छा नहीं, यदि दूसरी बात हो तो कहो। उन बातों को रहने दो।

विजया : नहीं, मुझे कहने दो। (सिसकती हुई) मैं अब भी. . .

स्कंदगुप्त : चुप रहो विजया! यह मेरी आराधना की--तपस्या की भूमि है, इसे प्रवंचना से कलुषित न करो। तुमसे यदि स्वर्ग भी मिले, तो मैं उससे दूर रहना चाहता हूँ।

विजया : मेरे पास अभी दो रत्न-गृह छिपे हैं, जिससे सेना एकत्र करके तुम सहज ही उन हूणों को परास्त कर सकते हो।

स्कंदगुप्त : परन्तु, साम्राज्य के लिए मैं अपने को नहीं बेच सकता। विजया चली जाओ, इस निर्लज्ज प्रलोभन की आवश्यकता नहीं। यह प्रसंग यहीं तक. . .

विजया : मैंने देशवासियों को सन्नद्ध करने का संकल्प किया है, और भटार्क का संसर्ग छोड़ दिया है। तुम्हारी सेवा के उपयुक्त बनने का उद्योगकर रही हूँ। मैं मालव और सौराष्ट्र को तुम्हारे लिए स्वतन्त्र करा दूँगी,अर्थलोभी हूण-दस्युओं से उसे छुड़ा लेना मेरा काम हैं। केवल तुम स्वीकार कर लो।

स्कंदगुप्त : विजया! तुमने मुझे लोभी समझ लिया है? मैं सम्राट बनकर सिंहासन पर बैठने के लिए नहीं हूँ। शस्त्र-बल से शरीर देकर भी यदि हो सका, तो जन्म-भूमि का उद्धार कर लूँगा। सुख से लोभ से, मनुष्य के भयसे, मैं उत्कोच देकर क्रीत साम्राज्य नहीं चाहता।

विजया : क्या जीवन के प्रत्यक्ष सुखों से तुम्हें वितृष्णा हो गई है? आओ हमारे साथ बचे हुए जीवन का आन्नद लो।

स्कंदगुप्त : और असहाय दीनों को, राक्षशों के हाथ, उनके भाग्य पर छोड़ दूँ?

विजया : कोई दुःख भोगने के लिए है, कोई सुख। फिर सबका बोझा अपने सिर पर लादकर क्यों व्यस्त होते हो?

स्कंदगुप्त : परन्तु, इस संसार का कोई उद्देश्य है। इसी पृथ्वी को स्वर्ग होना है, इसी पर देवताओं का निवास होगा, विश्व नियन्ता का ऐसा ही उद्देश्य मुझे विदित होता है। फिर उसकी इच्छा क्यों न पूर्ण करूँ, विजया। मैं कुछ नहीं हूँ, उसका अस्त्र हूँ--परमात्मा का अमोघ अस्त्र हूँ। मुझे उसके संकेत पर केवल अत्याचारियों के प्रति प्रेरित होना है। किसी से मेरी शत्रुता नहीं, क्योंकि मेरी निज की कोई इच्छा नहीं। देशव्यापी हलचल के भीतर कोई शक्ति कार्य कर रही है, पवित्र प्राकृतिक नियम अपनी रक्षा करने के लिए स्वयं सन्नद्ध है। मैं उसी ब्रह्मचक्र का एक. . .

विजया : रहने दो यह थोथा ज्ञान। प्रियतम! यह भरा हुआ यौवन और प्रेमी हृदय विलास के उपकरणों के साथ प्रस्तुत है। उन्मुक्त आकाश के नील-नीरद मण्डल में दो बिजलियों के समान क्रीड़ा करते-करते हम लोग तिरोहित हो जायँ। और उस क्रीड़ा में तीव्र आलोक हो जो हम लोगों के विलीन हो जाने पर भी जगत् की आँखों को थोड़े काल के लिए बन्द कर रक्खे। स्वर्ग की कल्पित अप्सराएँ और इश लोक के अनन्त पुण्य के भागी जीव भी जिस सुख को देखकर आश्चर्यचकित हों, वही मादक सुख, घोर आनन्द, विराट विनोद हम लोगों का आलिंगन करके धन्य हो जाय-

अगरु धूप की श्याम लहरियाँ उलझी हों इन अलकों से

व्याकुलता लाली के डोरे इधर फँसे हों पलकों से।
व्याकुल बिजली-सी तुम मचलो आर्द्र हृदय घनमाला से,
आँसू बरुनी से उलझे हों, अधर प्रेम के प्यालों से।
इस उदास मन की अभिलाषा अटकी रहे प्रलोभन से,
व्याकुलता सौ-सौ बल खाकर उलझ रही हो जीवन से।
छवि-प्रकाश-किरणें उलझे हों जीवन के भविष्य-तमसे,
ये लायेंगी रंग सुलालित होने दो कम्पन सम से।
इस आकुल जीवन की घड़ियाँ इन निष्ठुर आघातों से,
बजा करें अगणित यन्त्रों से सुख-दुख के अनुपातों से।
उखड़ी साँसें उछल रही हों धड़कन से कुछ परिमित हो,
अनुनय उलझ रहा हो तीखे तिरस्कार से लांछित हो।
यह दुर्बल दीनता रहे उलझी फिर चाहो ठुकराओ,
निर्दयता के इन चरणों से, जिसमें तुम भी सुख पाओ।

(स्कंद के पैरों को पकड़ती है।)

स्कंदगुप्त : (पैर छुड़ाकर) विजया! पिशाची। हट जा, नहीं जानती--मैंने आजीवन कौमार-व्रत की प्रतिज्ञा की है?

विजया : तो क्या मैं फिर हारी?

(भटार्क का प्रवेश)

भटार्क : निर्लज्ज हारकर भी नहीं हारता, मरकर भी नहीं मरता।

विजया : कौन, भटार्क?

भटार्क : हाँ, तेरा पति भटार्क। दुश्चरित्र! सुना था कि तुझे देशसेवा करके पवित्र होने का अवसर मिला है, परन्तु हिंस्त्र पशु कभी एकादशी का व्रत करेगा--कभी पिशाची शान्तिपाठ पढ़ेगी?

विजया : (सिर नीचा करके) अपराध हुआ।

भटार्क : फिर भी किसके साथ? जिसके ऊपर अत्याचार करके मैं भी लज्जित हूँ, जिससे क्षमायाचना करने मैं आ रहा था। नीच स्त्री!

विजया : घोर अपमान, तो बस. . . . .

(छुरी निकालकर आत्महत्या करती है।)

स्कंदगुप्त : भटार्क! इसके शवका संस्कार करो।

भटार्क : देव! मेरी भी लीला समाप्त है।

(छुरी निकालकर अपने को मारना चाहता है, स्कंदगुप्त हाथ पकड़ लेता है।)

स्कंदगुप्त : तुम वीर हो, इस समय देश को वीरों की आवश्यकता है। तुम्हारा यह प्रायश्चित नहीं। रणभूमि में प्राण देकर जननी जन्मभूमि पर उपकार करो। भटार्क! यदि कोई साथी न मिला तो साम्राज्य के लिए नहीं--जन्मभूमि के उद्धार के लिए मैं अकेला युद्ध करूँगा और तुम्हारी प्रतिज्ञा पूरी होगी, पुरगुप्त को सिंहासन देकर मैं वानप्रस्थ आश्रम ग्रहण करूँगा। आत्महत्या के लिए जो अस्त्र तुमने ग्रहण किया है, उसे शत्रु के लिए सुरक्षित रक्खो।

भटार्क : (स्कंदगुप्त के सामने घुटने टेककर) 'श्री स्कंदगुप्त विक्रमादित्य की जय हो।' जो आज्ञा होगी, वही करूँगा।

(प्रस्थान)

(पट-परिवर्तन)

शब्दार्थ-टिप्पणी

म्लान मुरझाया हुआ, मलिन **अवसाद** थकावट, विशाद **राका** चाँदनी, रात्रि **निखलम्ब** निराश्रय, आधार रहित **प्रतिश्रुत** विनत होना, मंजूर **शोणित** रक्त **इन्दीवर** कमल **सन्नद्ध** तैयार **उत्कोच** घूस, रिश्वत **अलक** केश, लट

मुहावरे

आँसू पोछना दिलासा देना **श्रीगणेश करना** शुरुआत करना **सिर नीचा करना** लज्जित होना

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) देवसेना कौन थी ?

(2) विजया का स्कंदगुप्त के पास आने का क्या उद्देश्य था ?

(3) स्कंदप्त विजया से क्यों दूर रहना चाहता था ?

(4) विजया स्कंदगुप्त को पाने के लिए क्या प्रलोभन देती है ?

(5) स्कंदगुप्त महादेवी की समाधि पर उनसे किसलिए क्षमा-याचना करता है ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) देवसेना ने स्कंदगुप्त का ममत्व क्यों अस्वीकार किया ?

(2) स्कंदगुप्त ने विजया का प्रणय-निवेदन क्यों अस्वीकार किया ?

(3) विजया ने आत्महत्या क्यों की ?

(4) भटार्क को आत्महत्या से रोकने का स्कंदगुप्त ने क्या कारण बताया ?

(5) स्कंदगुप्त की चारित्रिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

3. ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

(1) 'रसनिधि में जीवन रहा, मिटी न फिर भी प्यास
मुँह खोले मुक्तामयी सीपी स्वाती आस'!

(2) 'कोई दु:ख भोगने के लिए है, कोई सु:ख। फिर सबका बोझा अपने सिर पर लादकर क्यों व्यस्त होते हो।'

4. मुहावरे का अर्थ लिखकर वाक्य-प्रयोग लिखिए :

श्रीगणेश करना, आँसू पोछना, सिर नीचा करना

संधि-विच्छेद कीजिए :

आशीर्वाद, निरवलम्ब, व्यतीत, निष्काम, उद्धार, परमात्मा

योग्यता-विस्तार

- प्रस्तुत नाट्यांश का मंचन कीजिए।
- 'स्कंदगुप्त' नाटक पढ़िए।

●

19 बादल-राग

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

(जन्म : सन् 1897 ई; निधन : सन् 1961 ई.)

छायावादी कवि निराला का जन्म बंगाल के मेदनीपुर जिले के महिषादल में हुआ था। निराला का व्यक्तित्त्व सचमुच निराला है। विद्वानों ने उन्हें -'काव्य का देवता : निराला' और 'महाप्राण निराला' जैसे विशेषणों से विभूषित किया है। आजीवन अनेक अभावों से जूझने वाला, किंतु कभी न झुकने वाला यह स्वाभिमानी कवि एक निराली मस्ती और फक्कड़पन के साथ जीया। एक के बाद एक-पिता, पत्नी और पुत्री के अकाल अवसान के आघातों ने कवि को हिलाकर रख दिया किंतु हार नहीं मानी।'दु:ख ही जीवन की कथा रही' जैसी पंक्तियों में फूट पड़ने वाला उद्गार इसका प्रमाण है।

प्रेम, प्रकृति और सौंदर्य के चित्रण में निराला अन्य छायावादी कवियों से अलग मालूम पड़ते हैं। उनकी कविता का मूल स्वर विद्रोह का रहा है। उन्होंने रूढ़ियों और परंपराओं को इस कदर तोड़ा कि स्वयं भी अपनी ही परंपरा में न बँध सके। छायावादी होते हुए भी उन्होंने ही सबसे पहले छायावाद का अतिक्रमणकर प्रगतिशील एवं प्रयोगशील दृष्टि का परिचय दिया। छंद के बंधन तोड़कर मुक्त छंद का प्रवर्तन किया। माधुर्य और ओज दोनों की अभिव्यक्ति में कवि को कुशलता प्राप्त है। भाषा तत्सम्युक्त होते हुए भी प्रवाहमयी है। अनामिका, परिमल,गीतिका, तुलसीदास, वेला, नये पत्ते, कुकुरमत्ता उनकी प्रमुख काव्य कृतियाँ हैं। गद्य-साहित्य के अंतर्गत निरालाजी ने अप्सरा, अलका, निरूपमा, कुल्लीभाट, बिल्लेसुर बकरिहा जैसे उपन्यास एवं लिली, सखी, सुकुल की बीबी आदि कहानी-संग्रहों की रचना की।

'बादलराग' में कवि ने बादल के विविध रूप-रंगों एवं ध्वनियों को लय के साथ स्वरबद्ध किया है। झूम-झूम कर गरज-गरज कर बरसते बादलों द्वारा धरती को रसधार से सिंचित कर देना, नदी को कल-कल एवं झरनों को झर-झर का मधुर स्वर देना कवि को अभिभूत कर देता है। प्रकृति की इस मनोरम्य लीला को देखकर कवि का मन-मयूर नाच उठता है और वह गगन के उस छोर तक पहुँचना चाहता है जहाँ बादल-राग का और अधिक प्रत्यक्ष अनुभव किया जा सके। अनुभूति की रागात्मकता एवं स्वर की लयात्मकता इस कविता की अपनी विशेषता है। स्वच्छंद बादलों का अमर राग कवि को उन्मुक्त रूप से विचरण करने को विकल कर रहा है, ऐसा सहज ही प्रतीत होता है।

झूम-झूम मृदु गरज-गरज घन घोर!
राग-अमर! अम्बर में भर निज रोर!
झर झर झर निर्झर-गिरि-सर में
घर, मरु, तरु-मर्मर,सागर में,
सरित-तड़ित-गति-चकित पवन में,
मन में, विजन-गहन-कानन में,
आनन-आनन में, रव-घोर-कठोर-
राग-अमर! अम्बर में भर निज रोर!

अरे वर्ष के हर्ष!
बरस तू बरस-बरस रसधार!
पार ले चल तू मुझको,
बहा, दिखा मुझको भी निज
गर्जन-गौरव-संसार!
उथल-पुथल कर हृदय-
मचा हलचल-
चल रे चल,-
मेरे पागल बादल!

धँसता दलदल,
हँसता है नद खल्-खल्
बहता, कहता कुलकुल कलकल कलकल।
देख-देख नाचता हृदय
बहने को महाविकल-बेकल,
इस मरोर से-इसी शोर से-
सघन घोर गुरु गहन रोर से
मुझे-गगन का दिखा सघन वह छोर!
राग अमर! अम्बर में भर निज रोर!

शब्दार्थ-टिप्पणी

रोर कोलाहल, शोर **मरू** रेगिस्तान **तरु-मर्मर** पत्तों की सरसराहट **तड़ित-गति** बिजली की-सी तेज गति **विजन** निर्जन **आनन** मुँह **रव** आवाज **नद** बड़ी नदी **महाविकल** बहुत बेचैन **मरोर** ऐंठन **गुरु** भारी

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) कवि ने बादल-राग को अमर-राग क्यों कहा है ?

(2) कवि बादल के पागल रूप का आह्वान क्यों करता है ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) कवि बादल से किन-किन को जलमय करने का आग्रह करता है ?

(2) कवि बादल को 'अरे वर्ष के हर्ष' रूप में क्यों संबोधित करता है ?

(3) कविता का केन्द्रीय भाव अपने शब्दों में लिखिए।

(4) निम्नलिखित पंक्तियों भाव-सौंन्दर्य स्पष्ट कीजिए:

उथल-पुथल कर हृदय-
मचा हलचल-
चल रे चल,-
मेरे पागल बादल!
धँसता दलदल,
हँसता है नद खल्-खल्
बहता, कहता कुलकुल कलकल कलकल।

योग्यता-विस्तार

- सुमित्रानंदन पंत की 'बादल' और केदारनाथ सिंह की 'बादल ओ' कविता खोजकर पढ़िए।

•

20 राजेन्द्र बाबू

महादेवी वर्मा

(जन्म : सन् 1907 ई.; निधन : सन् 1987 ई.)

महादेवी वर्मा का जन्म उत्तरप्रदेश के फर्रुखाबाद में हुआ था। उनकी शिक्षा प्रयाग में हुई और प्रयाग महिला विद्यापीठ में प्राधानाचार्या रहीं। उनकी कविता में छायावाद और रहस्यवाद दोनों घुल-मिल गये हैं। बौद्धदर्शन के दुखवाद से प्रभावित होने केकारण मधुमय वेदना और करुणा की अंत: सलिला उनकी रचनाओं में निरंतर प्रवाहित होती रहती है। 'नीहार', 'रश्मि, 'नीरजा, 'सांध्यगीत, दीपशिखा आदि उनकी प्रमुख काव्य रचनाएँ हैं। 'यामा' के लिए उन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ।

एक अच्छी कवयित्री होने के साथ-साथ महादेवी एक सफल गद्यकार भी हैं। अपने रेखाचित्रों में उन्होंने समाज के दीन-हीन, शोषित-उपेक्षित लोगों के प्रति गहरी संवेदनशीलता का परिचय दिया है। अपने जीवन पथ पर मिलने वाले साथी-सर्जकों एवं महानुभावों की अंतरंग स्मृतियों को उन्होंने अपने संस्मरणों में बड़ी सहृदयता से सँजोया है। उनकी गद्य रचनाएँ उनकी कविता से किसी भी रूप में कम नहीं हैं। 'अतीत के चल-चित्र,' 'स्मृति की रेखाएँ,' 'पथ के साथी,' 'मेरा परिवार' उनकी सफल गद्य-कृतियाँ हैं। उनके गद्य में निहित सरलता-सहजता उसकी सबसे बड़ी पहचान है।

प्रस्तुत संस्मरण में महादेवीजी ने भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ.राजेन्द्रप्रसादजी के निकट सानिध्य में बिताए दिनों की स्मृतियों को बड़ी आत्मीयता के साथ चित्रांकित किया है। राजेन्द्रबाबू के बाह्य और अंतरंग व्यक्तित्व के विविध बिन्दुओं को शब्दों में साकार कर दिखाया है। उनके जीवन की सादगी-सरलता, संयम और शालीनता का बड़ा प्रभावशाली वर्णन इस संस्मरण में हुआ है। राजेन्द्रबाबू के साथ-साथ उनकी पत्नी की सरलता-सहजता को भी रेखांकित किया गया है। लेखिका के मन में सहज ही एक प्रश्न उभरता है कि जीवन मूल्यों के पारखी ऐसे अजातशत्रु व्यक्तित्व का निर्माण करने वाला साँचा क्या अब नहीं रहा, जिससे ऐसे महापुरुष ढलते थे। यह प्रश्न आज के संदर्भ में बहुत सूचक है।

राजेन्द्र बाबू को मैंने पहले-पहले एक सर्वथा गद्यात्मक वातावरण में ही देखा था, परंतु उस गद्य ने कितने भावात्मक क्षणों की अटूट माला गूँथी है, यह बताना कठिन है ।

मैं प्रयाग में बी.ए. की विद्यार्थिनी थी और शीतावकाश में घर भागलपुर जा रही थी। पटना में भाई के मिलने की बात थी, अत: स्टेशन पर ही प्रतीक्षा के कुछ घंटे व्यतीत करने पड़े।

स्टेशन के एक ओर तीन पैर वाली बेंच पर देहातियों की वेशभूषा में परन्तु कुछ नागरिक जनों से घिरे सज्जन जो विराजमान थे, उनकी ओर मेरी विहंगम दृष्टि जाकर लौट आई। वास्तव में भाई से यह जानने के उपरान्त कि उक्त सज्जन ही राजेन्द्र बाबू हैं, मुझे अभिवादन का ध्यान आया।

पहली दृष्टि में ही जो आकृति स्मृति में अंकित हो गई थी, उसमें इतने वर्षों ने न कोई नई रेखा जोड़ी है और न कोई रंग भरा है।

सत्य में से जैसे कुछ घटाना या जोड़ना सम्भव नहीं रहता वैसे ही सच्चे व्यक्तित्व में भी कुछ जोड़ना-घटाना सम्भव नहीं है।

काले घने पर छोटे कटे हुए बाल, चौड़ा मुख, चौड़ा माथा, घनी भृकुटियों के नीचे बड़ी आँखें , मुख के अनुपात में कुछ भारी नाक, कुछ गोलाई लिए चौड़ी ठुड्डी, कुछ मोटे पर सुडौल ओंठ, श्यामल झाई देता हुआ गेहुआँ वर्ण, बड़ी-बड़ी ग्रामिणों जैसी मूंछे जो ऊपर के ओंठ को ही नहीं ढँक लेती थीं नीचे के ओंठ पर भी रोमिल आवरण डाले हुए थीं। हाथ, पैर, शरीर सब में लम्बाई की ऐसी विशेषता थी जो दृष्टि को अनायास आकर्षित कर लेती थी।

उनकी वेशभूषा की ग्रामीणता तो और भी दृष्टि को उलझा लेती थी। खादी की मोटी धोती ऐसा फेंटा देकर बाँधी गई थी कि एक ओर दाहिने पैर पर घुटना छूती थी और दूसरी ओर बायें पैर की पिंडली। मोटे, खुरदुरे, काले बन्द गले के कोट में ऊपर का भाग बटन टूट जाने के कारण खुला था और घुटने के नीचे का बटनों से बन्द था। सर्दी के दिनों के कारण पैरों में मोजे जूते तो थे, परंतु कोट और धोती के समान उनमें भी विचित्र स्वच्छन्दतावाद था। एक मोजा जूते पर उतर आया था और दूसरा

टखने पर घेरा बना रहा था। मिट्टी की पर्त से न जूतों के रंग का पता चलता था, न रूप का । गाँधी टोपी की स्थिति तो और भी विचित्र थी। उसकी आगे की नोक बाईं भौंह पर खिसक आई थी और टोपी की कोर माथे पर पट्टी की तरह लिपटी हुई थी। देखकर लगता था मानो वे किसी हड़बड़ी में चलते-चलते कपड़े पहनते आये हैं, अत:जो जहाँ जिस स्थिति में अटक गया, वह वहीं उसी स्थिति में लटका रह गया।

उनकी मुखाकृति देखकर अनुभव होता था , मानो इसे पहले कहीं देखा है। अनेक व्यक्तियों ने उन्हें प्रथम बार देखकर भी, ऐसा ही अनुभव किया। बहुत सोचने के उपरान्त उस प्रकार की अनुभूति का कारण समझ में आ सका।

राजेन्द्र बाबू की मुखाकृति ही नहीं, उनके शरीर के सम्पूर्ण गठन में एक सामान्य भारतीय जन की आकृति और गठन की छाया थी, अत:उन्हें देखने वाले को कोई-न-कोई आकृति या व्यक्ति स्मरण हो आता था और वह अनुभव करने लगता था कि इस प्रकार के व्यक्ति को पहले भी कहीं देखा है। आकृति तथा वेशभूषा के समान ही वे अपने स्वभाव और रहन-सहन में सामान्य भारतीय या भारतीय कृषक का ही प्रतिनिधित्व करते थे। प्रतिभा और बुद्धि की विशिष्टता के साथ-साथ उन्हें जो गम्भीर संवेदना प्राप्त हुई थी, वही उनकी सामान्यता को गरिमा प्रदान करती थी। व्यापकता ही सामान्यता की शपथ है, परन्तु व्यापकता संवेदना की गहराई में स्थिति रखती है।

भाई जवाहरलाल जी की अस्तव्यस्तता भी व्यवस्था से निर्मित होती थी, किन्तु राजेन्द्र बाबू की सारी व्यवस्था ही अस्तव्यस्तता का पर्याय थी। दूसरे यदि जवाहरलाल जी की अस्तव्यस्तता देख लें तो उन्हें बुरा नहीं लगता था, परन्तु अपनी अस्तव्यस्तता के प्रकट होने पर राजेन्द्र बाबू भूल करने वाले बालक के समान संकुचित हो जाते थे। एक दिन यदि दोनों पैरों में भिन्न रंग के मोजे पहने किसी ने उन्हें देख लिया तो उनका संकुचित हो उठना अनिवार्य था। परन्तु दूसरे दिन जब स्वयं सावधानी से रंग का मिलान करके पहनते तो पहले से भी अधिक अनमिल रंगों के पहन लेते।

उनकी वेश-भूषा की अस्तव्यस्तता के साथ उनके निजी सचिव और सहचर भाई चक्रधर जी का स्मरण अनायास हो आता है। जब मोजों में से पाँचों उँगलियाँ बाहर निकलने लगती, जब जूते के तले पैर के तलवों के गवाक्ष बनने लगते, जब धोती, कुरते, कोट आदि का खद्दर अपने मूल ताने-बाने में बदलने लगता, तब चक्रधर इस पुरातन सज्जा को अपने लिए सहेज लेते। उन्होंने वर्षों तक इसी प्रकार राजेन्द्र बाबू के पुराने परिधान से अपने आपको प्रसाधित कर कृतार्थता का अनुभव किया था। मैंने ऐसे गुरु-शिष्य या स्वामी-सेवक फिर अब तक नहीं देखे।

राजेन्द्र बाबू के निकट सम्पर्क में आने का अवसर मुझे सन् 1937 में मिला जब वे कांग्रेस के अध्यक्ष के रूप में महिला विद्यापीठ महाविद्यालय के भवन का शिलान्यास करने प्रयाग आये। उनसे ज्ञात हुआ कि उनकी 15-16 पौत्रियाँ हैं, जिनकी पढ़ाई की व्यवस्था नहीं हो पाई है। मैं यदि अपने छात्रावास में रख कर उन्हें विद्यापीठ की परीक्षाओं में बैठा सकूँ, तो उन्हें शीघ्र कुछ विद्या प्राप्त हो सकेगी।

पहले बड़ी फिर छोटी फिर उनसे छोटी के क्रम से बालिकायें मेरे संरक्षण में आ गईं और उन्हें देखने प्राय: उनकी दादी और कभी-कभी दादा भी प्रयाग आते रहे। तभी राजेन्द्र बाबू की सहधर्मिणी के निकट सम्पर्क में आने का अवसर मिला। वे सच्चे अर्थ में धरती की पुत्री थीं, साध्वी, सरल, क्षमामयी, सबके प्रति ममतालु और असंख्य सम्बन्धों की सूत्रधारिणी। ससुराल में उन्होंने बालिका-वधू के रूप में पदार्पण किया था। सम्भ्रान्त जमींदार परिवार की परम्परा के अनुसार उन्हें घंटों सिर नीचा करके एकासन बैठना पड़ता था, परिणामत: उनकी रीढ़ की हड्डी इस प्रकार झुकी कि युवती होकर भी वे सीधी खड़ी नहीं हो पाईं।

राजेन्द्र बाबू ने मुझे बताया कि बालिकाओं की दादी किसी का छुआ नहीं खातीं, केवल ब्राह्मण रसोइया अपवाद है। छात्रावास का रसोइया महाराज उनकी थाली परोस देगा। कुछ अन्यथा न मानना, कहकर वे संकुचित से हो गए।

बिहार के जमींदार परिवार की बहू और स्वातन्त्र्य युद्ध के अपराजेय सेनानी की पत्नी होने का न उन्हें कभी अहंकार हुआ और न उनमें कोई मानसिक ग्रन्थि ही बनी। छात्रावास की सभी बालिकाओं तथा नौकर-चाकरों का उन्हें समान रूप से ध्यान रहता था। एक दिन या कुछ घंटों ठहरने पर भी वे सबको बुला-बुलाकर उनका तथा उनके परिवार का कुशल-मंगल पूछना

न भूलती थीं। घर से अपनी पौत्रियों के लिए लाए मिष्ठान में से प्राय: सभी बँट जाता था। देखने वाला यह जान ही नहीं सकता था कि वह सबकी इया, अइया अर्थात् दादी नहीं हैं।

गंगा-स्नान के लिए तो मुझे उनके साथ प्राय: जाना पड़ता था। उस दिन संगम पर जितना दूध मिलता, जितने फूल दिखाई देते सब उनकी ओर से ही गंगा-यमुना की भेंट हो जाते। कोलाहल करते हुए पंड़ों की पूरी पल्टन उन्हें घेर लेती थी, पर वे बिना विचलित हुए शान्तभाव से प्रत्येक को उसका प्राप्य देती चलती थीं।

बालिकाओं के सम्बन्ध में राजेन्द्र बाबू का स्पष्ट निर्देश था कि वे सामान्य बालिकाओं के समान बहुत सादगी से और संयम से रहें। वे खादी के कपड़े पहनतीं थीं, जिन्हें वे स्वयं ही धो लेती थीं। उनके साबुन तेल आदि का व्यय भी सीमित था। कमरे की सफाई, झाड़-पोंछ, गुरुजनों की सेवा आदि भी उनके अध्ययन के आवश्यक अंग थे।

उस समय संघर्ष के सैनिकों का गन्तव्य जेल ही रहती थी। अत: प्राय: किसी की पत्नी, किसी की बहिन, किसी की बेटी विद्यापीठ के छात्रावास में आ उपस्थित होती थी। स्वतन्त्र होने के उपरान्त उनमें से कुछ दिल्ली चली गईं और कुछ विशेष योग्यता प्राप्त करने के लिए अंग्रेजी के विद्यालयों में भर्ती हो गईं। केवल राजेन्द्र बाबू अपवाद रहे। उनके भारत के प्रथम राष्ट्रपति हो जाने के उपरान्त मुझे स्वयं उनकी पौत्रियों के सम्बन्ध में चिन्ता हुई। उनका स्पष्ट उत्तर मिला, "महादेवी बहन, दिल्ली मेरी नहीं है राष्ट्रपति भवन मेरा नहीं है। अहंकार से मेरी पोतियों का दिमाग खराब न हो जावे, तुम केवल इसकी चिन्ता करो। वे जैसे रहती आई हैं, उसी प्रकार रहेंगी। कर्तव्य विलास नहीं, कर्मनिष्ठा है।"

उनकी सहधर्मिणी में भी किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं हुआ। जब राष्ट्रपति भवन में उनके कमरे से संलग्न रसोई-घर बन गया तब वे दिल्ली गईं और अन्त तक स्वयं भोजन बनाकर सामान्य भारतीय गृहिणी के समान पति, परिवार तथा परिजनों को खिलाने के उपरान्त स्वयं अन्न ग्रहण करती थीं।

उस विशाल भवन में यदि अपने अद्‌भुत आतिथ्य की बात न कहूँ तो कथा अधूरी रह जायगी। बालिकाओं की दादी ने मुझे दिल्ली आने का विशेष निमंत्रण तो दिया ही, साथ ही, प्रयाग से सिरकी के बने एक दर्जन सूप लाने का भी आदेश दिया। उन्हों ने बार-बार आग्रह किया कि मैं उनके लिए इतना कष्ट अवश्य उठाऊँ, क्योंकि फटकने, पछोरने के लिए सिरकी के सूप बहुत अच्छे होते हैं पर कोई उन्हें लाने वाला ही नहीं मिलता।

प्रथम श्रेणी के डिब्बे में बारह सूपों के टाँगने पर जो दृश्य उपस्थित हुआ, उससे भी अधिक विचित्र दृश्य तब प्रत्यक्ष हुआ; जब राष्ट्रपति-भवन से आई बड़ी कार पर यह उपहार लादा गया। राष्ट्रपति-भवन के हर द्वार पर सलाम ठोंकने वाले सिपाहियों की आँखें विस्मय से खुली रह हईं। ऐसी भेंट लेकर कोई अतिथि न कभी वहाँ पहुँचा था, न पहुँचेगा। पर भवन की तत्कालीन स्वामिनी ने मुझे अंक में भर लिया।

राजेन्द्र बाबू तथा उनकी सहधर्मिणी सप्ताह में एक दिन अन्न नहीं ग्रहण करते थे। संयोग से मैं उनके उपवास के दिन ही पहुँची, अत: उनकी यह जिज्ञासा स्वाभाविक थी कि मैं कैसा भोजन पसन्द करूँगी। उपवास में भी आतिथेय का साथ देना उचित समझकर मैंने निरन्न भोजन की ही इच्छा प्रकट की। फलाहार के साथ उत्तम खाद्य पदार्थों की कल्पना स्वाभाविक रहती है। सामान्यत: हमारा उपवास अन्य दिनों के भोजन की अपेक्षा अधिक व्ययसाध्य हो जाता है, क्योंकि उस दिन हम भाँति-भाँति के फल, मेवे, मिष्ठान आदि एकत्र कर लेते हैं।

मुझे आज भी वह सन्ध्या नहीं भूलती, जब भारत के प्रथम राष्ट्रपति को मैंने सामान्य आसन पर बैठ कर दिन भर के उपवास के उपरान्त केवल कुछ उबले आलू खाकर पारायण करते देखा। मुझे भी वही खाते देखकर उनकी दृष्टि में सन्तोष ओर ओंठों में बालकों जैसी सरल हँसी छलक उठी।

जीवन मूल्यों की परख करने वाली दृष्टि के कारण उन्हें देशरत्न की उपाधि मिली और मन की सरल स्वच्छता ने उन्हें अजातशत्रु बना दिया। अनेक बार प्रश्न उठता है, क्या वह साँचा टूट गया जिसमें ऐसे कठिन कोमल चरित्र ढलते थे!

शब्दार्थ-टिप्पणी

शीतावकाश सर्दी की छुट्टियाँ **देहाती** ग्रामीण **विहंगम** पक्षीय दृष्टि **सुडौल** सुंदर आकार का **श्यामल** कालापन लिए हुए **फेंटा** कमर का घेरा, धोती का वह भाग जो कमर के घेरे पर बाँधा गया हो **स्वच्छन्दतावाद** बेधड़क,मनमाना **मुखाकृति** मुख का आकार **अनमिल** बेमेल **गवाक्ष** छोटी खिड़की, झरोखा **परिधान** पहनावा, पोशाक **प्रसाधित** शृंगार **कृतार्थता** धन्यता **सहधर्मिणी** पत्नी, भार्या **सूत्रधारिणी** संचालन करने वाला **पदार्पण** आगमन **सम्भ्रान्त** प्रतिष्ठित **अपराजेय** जो पराजित न हो, जो अभी हारा न हो **कोलाहल** शोरगुल **पल्टन** सेना, दल, समूह **गन्तव्य** लक्ष्य, स्थल **संलग्न** जुड़ा हुआ **आतिथ्य** मेहमान नवाजी **सिरकी** सरकंडा **सूप** अनाज फ़टकने का साज **फ़टकना-पछोरना** अन्न आदि को सूप में रखकर और उसे फ़टका देकर साफ़ करना, उलट-पलट परीक्षा करना **निरन्न** फ़लाहार **पारायण** किसी धर्म का नियमित रूप से नित्यपाठ जो आधोपांत किया जाय

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) महादेवी वर्मा शीत अवकाश पर कहाँ जा रही थीं ?

(2) राजेन्द्र बाबू की वेशभूषा कैसी थी ?

(3) राजेन्द्र बाबू प्रयाग क्यों गये थे ?

(4) राजेन्द्र बाबू ने अपने पौत्रियों को सम्मान व सादगी से रहने के लिए क्यों कहाँ ?

(5) महादेवी वर्मा उपवास के दिन राजेन्द्र बाबू के घर गईं तो वहाँ क्या हुआ था ?

(6) बालिकाओं के सम्बन्ध में राजेन्द्र बाबू ने क्या स्पष्ट निर्देश दिये थे ?

2. उत्तर लिखिए

(1) राजेन्द्र बाबू का चरित्र-चित्रण कीजिए।

(2) भारत के राष्ट्रपति होने के बावजूद राजेन्द्र बाबू का जीवन एक सामान्य व्यक्ति जैसा था, समझाइए।

3. सप्रसंग व्याख्या कीजिए :

(1) 'राजेन्द्र बाबू की मुखाकृति ही नहीं,उनके शरीर के संपूर्ण गठन में एक सामान्य भारतीय जन की आकृति और गठन की छाया थी।'

(2) 'राजेन्द्र बाबू की सारी व्यवस्था ही अस्तव्यस्तता का पर्याय थी।'

(3) 'जीवन मूल्यों की परख करने वाली दृष्टि के कारण उन्हें देशरत्न की उपाधि मिली और मन की सरल स्वच्छता ने उन्हें अजातशत्रु बना दिया।'

योग्यता- विस्तार

- राजेन्द्र बाबू के जीवन पर किसी और साहित्यकार द्वारा लिखे हुए संस्मरण को ढूँढकर पढ़िए और समझिए।

•

21 लहरों का निमंत्रण

हरिवंश राय 'बच्चन'

(जन्म : सन् 1907 ई; निधन : सन् 2002 ई.)

बच्चनजी का जन्म प्रयाग के एक कायस्थ परिवार में हुआ था। उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अंग्रेजी के अध्यापक के रूप में काम किया और अंग्रेजी साहित्य में कैम्ब्रिज युनिवर्सिटी से डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। छायावादोत्तर युग में 'मधुशाला'के प्रकाशन से उन्हें अपूर्व ख्याति प्राप्त हुई और हालावादी कवि के रूप में उनकी पहचान बनी। जीवन के अनेक उतार-चढ़ावों के बीच उनकी कविता का स्वर बदलता रहा। 'मधुशाला', 'मधुबाला', 'मधुकलश', 'निशानिमंत्रण', 'एकांत संगीत','बुद्ध और नाचघर' तथा 'बंगाल का काल' उनकी मुख्य काव्य कृतियाँ हैं। गद्य के अंतर्गत उन्होंने उत्कृष्ट आत्मकथाएँ लिखीं। 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ', 'नीड़ का निर्माण फिर-फिर', 'बसेरे से दूर' तथा 'दशद्वार से सोपान तक' जैसी आत्मकथाओं में उनके गद्य-लेखन की सृजनात्मकता के दर्शन होते हैं। बच्चनजी ने भारत सरकार के विदेश मंत्रालय में हिन्दी के सलाहकार के रूप में महत्वपूर्ण कार्य किया। वे राज्यसभा के मनोनीत सदस्य भी रहे।

'लहरों का निमंत्रण' कवि के आस्था एवं विश्वास को व्यक्त करने वाली कविता है। इसमें कवि ने समुद्र और उसकी तूफानी लहरों के माध्यम से संसार की हर चुनौती से टकराने के अपने दृढ़-संकल्प को प्रकट किया है। विश्व-वेदना से मुँह फेरकर चैन की नींद सोनेवाली संस्कृति उसे स्वीकार्य नहीं है। कवि का संवेदन-शील मन समस्याओं से संघर्ष करने के लिए कितना आतुर है। इसका परिचय कविता में मिलता है। कवि के विचार से 'लहरें' प्रतिकूल परिस्थितियों का प्रतीक हैं और 'निमंत्रण' चुनौती के स्वीकार का।

तीर पर कैसे रुकूँ मैं,
आज लहरों में निमन्त्रण।
रात का अन्तिम प्रहर है,
झिलमिलाते हैं सितारे,
वक्ष पर युग बाहु बाँधे,
मैं खड़ा सागर किनारे,
वेगु से बहता प्रभंजन
केश-पट मेरे उड़ाता,
शून्य में भरता उदधि
उर की रहस्यमयी पुकारें,
इन पुकारों की प्रतिध्वनि
हो रही मेरे हृदय में,
है प्रतिच्छायित जहाँ पर
सिंधु का हिल्लोल-कंपन!
तीर पर कैसे रुकूँ मैं,
आज लहरों में निमन्त्रण।
विश्व की सम्पूर्ण पीड़ा
सम्मिलित हो रो रही है,
शुष्क पृथ्वी आँसुओं से
पाँव अपने धो रही है,
इस धरा पर, जो बसी दुनिया
यही अनुरूप उसके-
इस व्यथा से हो न विचलित
नींद सुख की सो रही है,

क्यों धरणि अब तक न गलकर
लीन जलनिधि में गई हो ?
देखते क्यों नेत्र कवि के
भूमि पर जड़-तुल्य जीवन ?
तीर पर कैसे रुकूँ मैं,
आज लहरों में निमन्त्रण।

शब्दार्थ-टिप्पणी

तीर किनारा, तट **प्रभंजन** हवा, आँधी **उदधि** समुद्र **धरणि** धरती **प्रतिध्वनि** ध्वनि की लौटकर आई ध्वनि

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) कवि सागर किनारे किस समय खड़ा है ?
(2) हृदय में किसकी प्रतिध्वनि हो रही है ?
(3) पृथ्वी के आँसू किसके प्रतिरूप हैं ?
(4) दुनिया इस व्यथा से विचलित न होकर क्या कर रही है ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) 'लहरों का निमंत्रण' कविता का भाव स्पष्ट कीजिए।
(2) कविता में व्यक्त सामाजिक पीड़ा को स्पष्ट कीजिए।

योग्यता-विस्तार

- नदी या समुद्र से संबंधित किसी अन्य कवि की कविता खोजकर पढ़िए और समझिए।

●

22	# बड़ी दादी की बड़ी बात

कमलेश्वर

(जन्म : सन् 1932 ई.; निधन : सन् 2007 ई.)

कमलेश्वर का जन्म उत्तरप्रदेश के मैनपुरी में हुआ था। एक सफल कथाकार होने के साथ-साथ एक प्रबुद्ध पत्रकार एवं संपादक के रूप में उनका योगदान बहुत महत्त्वपूर्ण रहा है। 'नई कहानियाँ,' 'सारिका,' कथायात्रा जैसी चर्चित पत्रिकाओं का सफल संपादन किया। उन्होंने दूरदर्शन के लिए अनेक वृत्तचित्रों का लेखन, निर्देशन और निर्माण किया। 'चंद्रकांता,' 'बेताल पच्चसी' जैसी दूरदर्शन-शृंखलाओं का लेखन कार्य किया।

उनके प्रमुख उपन्यास हैं-'लौटे हुए मुसाफिर', 'तीसरा आदमी', 'डाक बंगला', 'काली आँधी', 'आगामी अतीत', 'सुबह, दोपहर, शाम', 'कितने पाकिस्तान', कहानी संग्रहों में 'जार्ज पंचम की नाक', 'माँस का दरिया', 'इतने अच्छे दिन', 'कोहरा', 'कथा प्रस्थान' आदि मुख्य हैं। 'नई कहानी की भूमिका' उनका महत्त्वपूर्ण समीक्षा ग्रंथ है। उनके बेहद लोकप्रिय आत्म परक संस्मरण हैं- 'जो मैंने जिया', 'यादों के चिराग' और 'जलती हुई नदी'। इसके अलावा उन्होंने अनेक ग्रंथों का लेखन-संपादन किया। सौ से अधिक हिन्दी-फिल्म कथाएँ लिखीं। 'उन्हें साहित्य अकादमी' एवं 'पद्मभूषण' सम्मान भी प्राप्त हुआ।

प्रस्तुत उपन्यास-अंश 'सुबह....दोपहर...शाम' नामक उपन्यास से लिया गया है। लेखक के अनुसार आजादी के आंदोलन के दौरान केवल बड़े-बड़े नेता ही देश के लिए नहीं लड़ रहे थे बल्कि दूर-दराज छोटे-छोटे गाँव के लोग भी अपने-अपने स्तर पर त्याग-बलिदान कर इस लड़ाई में अपना योगदान कर रहे थे। बड़े बाबा सन् 1857 की लड़ाई में शहीद हो गये थे, इसका स्वाभिमानपूर्वक स्मरण कर बड़ी दादी अपने पूरे परिवार को उसी मार्ग पर चलाना चाहती है। वह जसवंत को अंग्रेजों की गुलामी करने से रोकना चाहती है। बड़ी दादी अपनी बेटी कलावती को उस रास्ते पर चलता न देख उसे हमेशा के लिए भुला दिया था। बड़ी दादी में देशप्रेम तो कूट-कूट कर भरा ही है, उसे अपनी मिट्टी , प्रकृति, पशु-पक्षी से तथा अपने परिवार से बेहद प्रेम और लगाव हैं। उनके विचार भी ऊँचे हैं बातें भी बड़ी।

बस्ती वालों को आँधियों की याद तो थी, रेलगाड़ी की पहचान तक नहीं थी। उनकी समझ में नहीं आता था कि रेलगाड़ी कैसी होगी और कैसे चलेगी! बैल तो बैलगाड़ी को चला सकते हैं, पर कोयला-पानी से गाड़ी कैसे चलेगी! बड़ी दादी बहुत परेशान थीं- खेतों में गेहूँ की फसल पकी खड़ी थी। कटाई होने वाली थी और जसवन्त कह रहा था- मुझे जाना था। बड़ी दादी ने जाँता रोककर अपने हाथ झाड़े, लहँगे का घेर मोर के नाचते परों की तरह फैलाया, फिर उसे समेटा और आकर आंगन में खड़ी हो गईं।

उन्होंने आँगन से मुंडेरों की तरफ देखा-जहाँ घास पककर सोने के तारों की तरह झिलमिला रही थी...फिर मुंडेर के पार आसमान की तरफ़ देखा...

बड़ी दादी फौरन सब-कुछ समझ जाती थीं। वह घर के लोगों से तो बात करती ही थीं, चिड़ियों, मोर और साँप से भी बात कर लिया करती थीं। सोने के तारों की तरह झिलमिलाती घास के इशारे भी समझ लेती थीं और हवा की आवाज़ से प्रकृति के इरादे भी मालूम कर लेती थीं।

यही तो बड़ी बात थी-बड़ी दादी में। उनकी दुनिया बहुत बड़ी थी। एक बार बरसात की रात थी- धाारासार पानी बरस रहा था। मुंडेरों और छतों की मिट्टी कट-कट कर परनालों से गिर रही थी। पतेल के छप्पर पर खिस-खिस करता पानी गिर रहा था। चारों तरफ़ घोर अंधियारा था- आठ कमरों के घर में जगह-जगह तेल-बाती की कुप्पियाँ जल रही थीं। बाहर का बड़ा दरवाजा खुला पड़ा था। कुन्दन कुप्पी लेकर दरवाज़ा बन्द करने गया तो चौखट और दरवाज़े की किनारी जहाँ चूल में फंसती थी- वहाँ से एकदम तेज़ फुफकार की आवाज़ आई थी। कुन्दन डरकर पलटा था। चीखता हुआ-साँप! साँप! और लाठी लेकर लौटने लगा था तो बड़ी दादी ने रोक लिया था।

-कहाँ है साँप ?

-वहाँ। दरवाज़े की चौखट में फँसा हुआ है।

-चल, मैं देखती हूँ। लाठी उधर रख, कुप्पी मुझे दे।

हाथ में कुप्पी लेकर, अपने भीगे बालों को संवारती बड़ी दादी बाहर वाले दरवाज़े की तरफ़ चली तो घर के सभी लोग पीछे जुड़ गये थे।

–कहाँ हैं सर्पदेवता?

–वहाँ...चौखट में। कुन्दन ने डरते हुए दूर से कहा था। तभी अंधेरी चौखट की मुर्दा लकड़ी में से एक ज़हर बुझी फुफकार आई थी।

बड़ी दादी हाथ की कुप्पी ऊँची करके उधर बढ़ गई थीं। कुप्पी की लौ में उन्होंने देखा था–साँप सचमुच फंस गया था। चूल के कड़े में आधा हिस्सा लिपटा रह गया था। वह बहुत गुस्से में आपा खोकर फुफकार रहा था।

बड़ी दादी ने पास पड़े पुआल के ढेरों को खिसका कर ऊपर खड़े होने की जगह बना ली थी और उन्होंने उस साँप को गौर से देखा था, साँप ने उन्हें। बड़ी दादी ने धीरे–धीरे पुचकारा था। साँप ने फुफकारा था।

–तुम्हारे चोट लग गई!

साँप ने फिर कुछ कहा था।

–बहुत दुःख रहा है! बड़ी दादी ने पूछा था। साँप ने पुफकार कर फिर कुछ बोला।

बड़ी दादी ने दरवाज़े को धीरे–धीरे खोला था– साँप के सरकने की चिकनी आवाज़ आई थी और एक पल में साँप सरककर दरवाज़े के बाहर हो गया।

–इतने पानी में कहाँ चले गए... यहीं रुक जाते। कहते हुए बड़ी दादी कुन्दन को कुप्पी थमाकर पलटी थीं...दरवाज़ा बन्द कर दे।

घर के सभी लोग आधे सकते में थे।

धारासार पानी बरसता रहा था।

बड़ी दादी की फतोई में से आती गुड़–जैसी महक को सूँघते हुए छोटी मुनिया ने लेटे–लेटे उनसे और चिपकते हुए पूछा था– बड़ी दादी !

–हूँ !

–साँप क्या बोला था?

–कहता था, बहुत दुःख रहा है।...

ऐसी कितनी रातें, कितने दिन बीत गए–बड़ी–बड़ी रातें–बड़े–बड़े दिन। उसी तरह जाड़ा, गर्मी, बरसात आती रहीं। उसी तरह खेतों में फसलें उगती रहीं। पिछवाड़े कैथे और बेल पकते रहे। हर मौसम में मुंडेरों पर मोर नाचने आते रहे और छोटी मुनिया हमेशा कहती रही–मोर बड़ी दादी के लिए नाचने आते हैं!

–नहीं बेटा! मोर सबके लिए नाचने आते हैं! बड़ी दादी कहती थीं।

बड़ी दादी ने एक बार फिर अपना लहंगा मोर के नाचते परों की तरफ फैलाकर समेटा और आँगन में खड़े–खड़े आसमान से निगाहें हटाकर जसवन्त से कहा

–आज सगुन अच्छा नहीं। पता नहीं तुम्हें, कैसे दिन हैं। मोर जंगलों में लौट गए हैं.. जरते–बरते दिन आ गए हैं। ऐसे में तू अंग्रेज़ बहादुर की गाड़ी चलाने जाएगा।

–बड़ी अम्मा! दो रुपया महीना मिलेगा। तुमने अभी गाड़ी देखी नहीं– आँधी की तरह आती है। जसवन्त ने कहा।

–मैंने आकाश देखा है, देख ज़रा आकाश का रंग। तेरी गाड़ी जब आएगी, तब आएगी...अभी तो पीली आँधी आ रही है। जगन से कहो, कटाई करने नहीं जाएगा, नहीं तो खेत का अन्न सब उड़ जाएगा। तू भी अंग्रेज़ बाहदुर की गाड़ी चलाने नहीं जाएगा...बड़ी दादी ने बोला, फिर आवाज़ लगाई–बड़की बहू! ज़ोर की आँधी आ रही है। आँगन में बढ़नी सिल–बट्टे से दबा दे !

सबने आसमान की तरफ़ देखा–आँधी के कोई आसार नहीं थे, आसमान में चिड़ियों के झुण्ड और चीलों के एकाध बच्चे चक्कर लगा रहे थे।

बड़ी अम्मा! आँधी तो कहीं नहीं आ रही है। जसवन्त ने कहा तो बड़ी दादी ने आसमान में उड़ते पंछियों की तरफ़ इसारा करके बताया–

–इनके परों को देख। कैसे थरथरा रहे हैं। सारे पंछी पश्चिम की तरफ़ जा रहे हैं। उधर से ही आँधी आ रही है।

तभी आसमान पीला पड़ने लगा–हवा के झकोरे मुंडेरों की घास से टकारा–टकारा कर गुज़रने लगे–चारों तरफ़–पूरी बस्तीं में हवा की सनसनाहट व्याप गई। धीरे–धीरे हवा की आवाज़ चाबुक की तरह छतों पर पड़ने लगी और पूरा आसमान मटमैली, पीली मिट्ट ी से भर गया–जैसे मीलों दूर कोई ज्वालामुखी फूटा हो और उसकी जलती पीली रेत के मटमैले बगूले

आसमान में उठते चले गए हों।

अब घर में यह कोई आश्चर्य की बात नहीं रह गई थी कि जो बड़ी दादी कहती थीं–वह फ़ौरन होता हुआ दिखाई पड़ने लगा था।

जसवन्त और बहुओं ने पीली आँधी की रेत से बचने के लिए जल्दी-जल्दी खिड़कियाँ और दरवाज़े बन्द कर लिए। भीतर कमरों में अजीब-सा पीला अंधेरा छा गया था। आँधी के सनसनाते थपेड़े खिड़कियों के पल्लों और ढीली कुण्डी वाले दरवाज़ों पर लगातार पड़ रहे थे। हवा घूम-घूम नाच रही थी– बड़े घर की कच्ची मिट्टी की कार्निसों में कबूतर आकर दुबक गए थे–मीलों दूर की सूखी पत्तियाँ और तिनके दीवारों पर झाड़-से लगाते नीचे गिर रहे थे–जैसे पंख-जले पतंगे गिर पड़ते हैं। दीवार की किनारियों और दरवाज़ों की संधो से पीली रेत की घुएँ-जैसी बारिश जारी थी। संधों से झाँकते बच्चों की आँखों में रेत भर गई थी–वे आँखें मल रहे थे।

बड़ी दादी छुटकू को गोद में बैठा कर अपनी ओढ़नी का फाया बनाते हुए मुंह की भाप से उसे गरमा कर उसकी आंखों को सेंकते हुए जसवन्त से बोली थीं–

–तुम्हारा जाना जरूरी है जसवन्त?

–हाँ, बड़ी अम्मा!

–अंग्रेज बहादुर की नौकरी जरूरी है?

–वह तो नहीं है, बड़ी अम्मा...लेकिन...

–दो रुपये महीना मिलेगा, इसलिए जा रहा है?

–वह बात भी नहीं है बड़ी अम्मा!

–तब क्यों अंग्रेज बहादुर की गुलामी करने जा रहा है? तुझे भी क्या अपनी बुआ-फूफाजी की गद्दारी अच्छी लगने लगी है।

जसवन्त ने यह सुना तो सन्नाटे में आ गया। उसने कभी नहीं सोचा था कि बड़ी अम्मा इतना सोचती होंगी–उसे तो हमेशा यही लगी कि बड़ी अम्मा अपनी गृहस्थी, बहुओं, नाती-पोतों में डूबी हुई हैं। घर की दीवारों,चौके और घरेलू बातों में घिरी हुई हैं--वह कभी भी अंग्रेजों और उनकी हुकूमत के बारे में सोचती होंगी– या बुआ-फूफाजी के घराने के बारे में ऐसे विचार रखती होंगी। उनके मुँह से बुआ, फूफाजी के घर को 'गद्दार' सुनकर वह सोच ही नहीं पा रहा था कि उनसे क्या कहे, जवाब दे? या फिर अपने बारे में वह बड़ी अम्मा को क्या सफाई दे? उन्हें कैसे बताए कि वह अंग्रेजों के लिए देश से गद्दारी करने नहीं जा रहा है, वह सिर्फ रेलगाड़ी के महकमे में काम करने जा रहा है– यह महकमा ऐसा है जिससे नई ज़िन्दगी देश में आएगी.. रेलें चलेंगी तो देश एकता के सूत्र में जुड़ जाएगा। अपने गाँव का आदमी दूसरे गाँव तक पहुँचा करेगा–दूसरे गाँव का वासी अपने गाँव तक आ सकेगा।

जसवन्त ने बड़ी दादी के मुँह की तरफ़ देखा– तो और भी सहम गया–उनके चेहरे पर अजीब-सा कड़वापन छाया हुआ था। मुँह में जैसे कसैला स्वाद हो। उसकी हिम्मत नहीं पड़ी कि वह उनसे आँख मिला सके, या बिना आँख मिलाए अपनी सफाई दे सके। उसका गला सूखने लगा। उसने कुछ कहने की कोशिश भी की तो हकला कर रह गया...बड़ी दादी ने उसका यह हाल देखा तो खुद ही बोल पड़ीं...

–क्यों, क्या हुआ? मुँह पर ताला क्यों पड़ गया? क्या अपना घर, अपनी धरती तुझे कम पड़ती है जो रेलगाड़ी के महकमे में जा रहा है।

–वह बात नहीं है बड़ी अम्मा...

–तो क्या बात है?

–खेती संभालने वाले बहुत हाथ हैं घर में...

–तुझे रोटी की कमी पड़ती है क्या?

–नहीं !

–तो फिर अंग्रेज़ बहादुर की गुलामी करने काहे जा रहा है– क्या उनकी रोटी में ज़्यादा गुड़ लगा है...

–वह बात नहीं है, बड़ी अम्मा !

–देख जसवन्त ! रोटी तो कुत्ता भी खाता है, जो टुकड़ा फेंक दो, उसे ही खा लेता है, पर मानुष रोटी-रोटी में भेद करता है...तू रोटी का भेद भूल गया है... जैसे तेरी बुआ भूल गई है। तेरी बुआ इसी पेट की जाई है...पर मेरी कोख उसे जनम देकर

चौदह बरस बाद काली पड़ गई। वह अपने आदमी के साथ अंग्रेज़ बहादुर की रोटी तोड़ने लगी...उसकी तड़क-भड़क, हवेली, पैसा, तलवार-तुझे भी ज़्यादा सुहाने लगीं? खैर छोड़, मुझे कुछ नहीं कहना है, जो जी में आए कर जाके... आँधी बीत जाए, आसमान खुल जाए...तू चला जा...

जसवन्त सिर लटकाकर रह गया। बाहर तो आँधी थी ही, उसकी किसकिसाहट आँखों, कानों, दाँतों में मौजूद ही थी, पर बड़ी अम्मा की ज़हर-बुझी बातों ने उसके मन में भी एक टीसती किसकिसाहट पैदा कर दी थी।

जसवन्त को बड़ी अम्मा का दु:ख मालूम था। बड़े बाबा राजा साहब के सिपहसालार थे। 1857 में जब आज़ादी का संग्राम छिड़ा था तो बड़े बाबा राजा साहब के साथ, खुद घोड़े पर और जान हथेली पर लेकर उनकी रक्षा करने साथ-साथ चले थे। चार घुड़सवार और थे।

राजा साहब को भागना पड़ा था-किला छोड़कर, क्योंकि अंग्रेज़ों का तोपखाना आगरा से आया था। उसने तालाब वाली तरफ़ किले के पिछवाड़े हमला किया था। अंग्रेज़ों के पास ताकतवर तोपें थीं, किसी को अंदाज़ा नहीं था की अंग्रेज़ अपना तोपख़ाना लेकर आएँगे।

अंग्रेज़ महाराजा को किले में क़ैद नहीं कर पाए-किले पर तीन ओर से हमला हुआ था। किसी तरह महाराजा अपने पाँच विश्वस्त साथियों के साथ घोड़ों पर भाग निकले थे। अंग्रेज़ों ने पीछा भी किया था। इलाक़ा मैदानी था-इसीलिए भागते महाराजा और बड़े बाबा ने ही राय दी थी कि वे झाँसी की तरफ़ भागें-उन्हें यह पता नहीं था कि गौस खान की तोपें खामोश हो चुकी हैं और झाँसी का पतन हो चुका है।

फिर भी छह सवार झाँसी की तरफ़ भागते चले जा रहे थे। तभी चौपुला बम्बा पड़ा था। महाराजा ने अपने घोड़े को एड़ लगाकर बम्बा पार किया था-छलांग लगाकर घोड़ा एक चट्टान पर गिरा था,और गिरते ही उसकी छाती फट गई थी! तब पाँच घोड़े रह गए थे। महाराजा अपने प्यारे घोड़े को छोड़ने के लिए तैयार नहीं थे-पर घोड़ा भी ऐसा वफादार था कि अपनी फटी छाती लिए वह पानी में कूद गया था और बहते-बहते गहरे पानी में खो गया था।

तब बाबा ने अपना घोड़ा महाराजा को दिया था और खुद पैदल झाँसी की तरफ़ चल दिए थे। महाराजा तो निकल गए, पर बाबा को अंग्रेजों के सैनिकों ने गोली मार दी थी और बाद में महाराजा को भी क़ैद कर लिया था। बाबा की लाश नहीं मिली थी।

तभी से बड़ी दादी कहती थीं-मैं तो सदा सधवा हूँ! मेरा आदमी शहीद हुआ है...

और तभी से बड़ी दादी के मन में अपनी बेटी कलावती के लिए एक नफरत घर कर गई है। बड़ी दादी और बाबा ने बड़े चाव से अपनी बेटी कलावती की शादी की थी-फर्रुखाबाद के नवाब के दरबारियों में से एक के लड़के के साथ।

उनका दामाद गाजीपुर के अंग्रेजी खज़ाने का खजांची था। जब गदर हुआ तो उसने अंग्रेजी खज़ाना भी लूटा और अपनी हवेली में अंग्रेजों को पनाह देकर जान भी बचाई। एक तरफ़ बेईमानी की, दूसरी तरफ़ वफादारी दिखाई।

और तब से सब-कुछ बदलता चला गया।-बड़ी दादी की जागीरी ज़मींदारियां छिनती चली गईं और दामाद को तमगे और तलवारें मिलती चली गईं। उनकी बेटी अंग्रेजों की दया से बिना तिलक की रानी कहलाने लगी और दामाद बिना तिलक का राजा-क्योंकि उन्होंने दो अंग्रेजों की जान बचाई थी।

जसवन्त एक बार बुआ कलावती के यहाँ गया था। तब उसने वहाँ हवेली में देखा था-फूफाजी की वे बड़ी-बड़ी तस्वीरें, जिनमें उनके फेंटे से मोतियों जड़ी तलवार लटक रही है। एक ऊँचे स्टूल पर गमले में अंग्रेजी पौधा लगा है और फूफाजी अंग्रेजी लिबास पहने, कोहनी टिकाए शान से उस तस्वीर में खड़े हैं- पीछे दीवार पर महारानी विक्टोरिया की फोटो लगी है। घर में फिटन थी, तीस-चालीस नौकर-चाकर थे। ज़मींदारियों से आया अन्न भरने की जगह नहीं थी, जो रोज़ सुबह गरीबों में बाँटा जाता था...गरीबों का झुण्ड रोज़ सुबह उनकी बड़ी हवेली के फाटक पर आता।

तब फूफाजी का एक पुराना नौकर जाकर उन्हें जगाया करता था--साहेब! जय-जयकारी आ गए।

फूफाजी जय-जयकारी से ही जागते थे।

वे बरसात के दिन थे। मूसलाधार पानी बरस रहा था। एक सुबह जब जय-जयकारी नहीं आए, तब साहेब के सारे सेवकों ने ही मिलकर फाटक पर जय-जयकार किया था, तब उनकी आँख खुली थी।

वह चीखी थीं–इन सौगातों में तुम लोगों के पिता और बाबा के खून के छींटे हैं। ये अपवित्र हैं। जसवन्त को भी कहीं बाहर वाले दरवाज़े पर खड़ा कर दिया गया था–पहले उस पर गंगाजल छिड़का गया था, फिर भीतर आने दिया गया था।

जसवन्त तब छोटा था, वह यह सब समझ नहीं पाया था। उसी दिन दादी ने घर में ऐलान कर दिया था, कलावती अब कलावती नहीं–वह कलंकवती है, उसके घराने से हमारा कोई लेना–देना नहीं है।

जसवन्त को सब कुछ याद आ गया– और पिछले सब बरस भी। लेकिन अब उसने मिडिल पास किया था, गाँव में रहकर बेकार पड़े रहना उसे सुहाता नहीं था और वह यह बता भी नहीं सकता था कि सच पूछो तो फूफाजी ने ही उसे रेलवे के महकमे की नौकरी दिलवाई थी। वह चाहता था–बड़ी अम्मा को यह बात न मालूम होने पाए। उन्हें मालूम होगी तो बहुत बावेला मचेगा।

जसवन्त इसलिए ज़्यादा बात नहीं कर रहा था। आँधी तो कब की गुज़र गई थी। बड़ी दादी बढ़नी लेकर घर भर की सफाई में उलझ गई थीं, लेकिन उनके चेहरे का कड़वापन अभी गया नहीं था। जसवन्त यह भांप रहा था। अब बड़ी दादी बात भी खुद नहीं करना चाहती थीं, और जसवन्त को नौकरी पर जाना था। आखिर वह खुद ही उनके पास गया और धीरे से बोला था--

–बड़ी अम्मा।

–बोलो!

–मुझे जाना ही पड़ेगा।

–तो अपने अम्मा–बाबू से पूछ लो और चले जाओ। मुझसे क्या पूछते हो?

जसवन्त के पिता और माँ की हिम्मत नहीं थी कि बड़ी दादी के सामने बोल जाएँ। उसकी अम्मा सिर झुकाए सफाई में लगी रहीं। बापू जी अपनी चुटिया टोपी के नीचे करके गर्दन पर खुजाते हुए बाहर की तरफ़ टहल गए।

–बड़ी अम्मा! जब तक तुम कुछ नहीं कहोगी, तक तक कोई बोलेगा नहीं। तुम हाँ कह दो तो सब ठीक हो जाएगा।

–बोल बहू! तू क्या कहती है? बड़ी दादी ने जसवन्त की माँ से पूछा था, फिर जसवन्त की बहू को आवाज़ लगाकर बोली थीं–छोटी बहू तू बोल।

सबके मुँह पर ताले पड़े थे । वे आँखों–आँखों में देख भी नहीं रही थीं। आखिर बड़ी दादी ने सबकी तरफ़ बारी–बारी से देखकर ,फिर सवाल दोहराया था–

–बोल बड़ी बहू! क्या कहती है?

–मैं क्या कहूँ! जो आप कहेंगी, वही तय होगा।

–लेकिन, हमने तो तय कर लिया है। उनका इशारा जसवन्त की तरफ़ था, फिर अपने सन जैसे सफेद बालों की लट को समेटती हुई वह बोली थीं–

तू शहर कब गया? कब जाके तू गूलामी की नौकरी तय कर आया? 57 में तो बाबा शहीद हुए–तब तेरा बाप तीन साल का था। त्रयालीस बरस उसे पाला है, यही सोचकर कि ये जिएगा तो फले–फूलेगा। यह आंगन किलकारियों से चहकेगा और किसी दिन कोख का जाया कोई माई का लाल अपने बाबा की मौत का बदला लेगा। महाराजा साहब की गढ़ी की दीवार में जो अंग्रेज़ी गोला लगा ता– उसका हिसाब चुकता करेगा।

कहते–कहते बड़ी दादी ने अपनी आंखें पोंछ ली थी। चोखट से चिपटी खड़ी सात बरस की शान्ता बड़ी दादी को टुकुर–टुकुर देख रही थी । उस पर नज़र पड़ते ही बड़ी दादी ने जसवन्त से पूछा–तू छोटी बहू और सन्तो को भी ले जाएगा?

बड़ी दादी शान्ता को प्यार से सन्तो पुकारती थीं। सन्तो ने अपना नाम सुना तो एकदम बोली–बड़ी दादी! मैं तुम्हारे पास रहूँगी।

बड़ी दादी ने उसे कमर से चिपका लिया और जसवन्त की माँ को हुक्म दे दिया– बड़ी बहू! इसे जाने दे...छोटी बहू भी जाना चाहे तो चली जाए---बस, सन्तो तेरे पास रहेगी।

शब्दार्थ-टिप्पणी

जाँता गेहूँ पीसने की पत्थर की मशीन, जिसे औरतें हाथ से चलाया करती हैं **पर** पंख **मुंडेर** खेत की मेड़ **फौरन** तुरंत **आसार** लक्षण **पुआल** धान **गौर** ध्यान से **फतोई** बंडी, फतूही **बढ़नी** झाड़ू **फाया** काहा, **हूकुमत** शासन अधिकार **महकमा** विभाग **जाई** पैदा **सुहाने** अच्छे **हमला** आक्रमण **सौगात** भेंट, उपहार **नफरत** घृणा विरक्ति **वफादार** निष्ठावान **हुकम** आदेश

मुहावरे

मुँह पर ताला पड़ना बोलती बंद हो जाना **आपा खोना** होश खोना **जान हथेली पर रखना** जान की परहवाह न करना **कोख काली पड़ना** कोख को कलंकित करना

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) बस्तीवालों को किसकी पहचान नहीं थी ?

(2) घास पककर कैसी लग रही थी ?

(3) बड़ी दादी और जसवन्त के बीच कौन-सा रिश्ता है ?

(4) राजा साहब के सिपहसालार कौन थे ?

(5) अंग्रेजों का तोपखाना कहाँ से आया था ?

(6) बड़ी दादी अपने को सघवा क्यों मानती थी ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) बड़ी दादी घर के लोगों के अलावा किनसे बातें करती थीं ?

(2) बड़ी दादी और साँप के बीच क्या-क्या बातें हुई।

(3) रेलगाड़ी के लाभ समझाइए।

(4) मनुष्य और कुत्ते की रोटी में फर्क बताइए।

(5) बड़ी दादी का चरित्र-चित्रण कीजिए।

(6) बड़ी दादी कलावती को कलंकवती क्यों कहती थी ?

योग्यता-विस्तार

- भीष्मसाहनी कीं 'चीफ की दावत' कहानी ढूँढ कर पढ़िए और समझिए।

•

23 रामदास

रघुवीर सहाय

(जन्म : सन् 1922 ई; निधन : सन् 1992 ई.)

रघुवीर सहाय का जन्म लखनऊ में हुआ था। लखनऊ से ही अंग्रेजी में एम. ए. कर उन्होंने पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रवेश किया। उन्होंने 'प्रतीक' और 'कल्पना' में सहसंपादक और 'दिनमान' के संपादक के रूप में उल्लेखनीय कार्य किया। अज्ञेय द्वारा संपादित 'दूसरा सप्तक' के कवि के रूप में वे प्रकाश में आए। आकाशवाणी से भी वे संबद्ध रहे।

रघुवीर सहाय की कविता अपने समय के सरोकारों-समस्याओं से जुड़कर चलने वाली कविता है। अपने समय की अमानवीय राजनीति पर तीखा व्यंग्य उनकी कविता की सबसे बड़ी विशेषता है। उन्होंने आम बोलचाल की अखबारी भाषा का प्रयोग कर भाषा की परंपरागत रूढ़ियों को तोड़ा है। इनकी प्रसिद्ध काव्य-कृतियाँ हैं-'सीढ़ियों पर धूप,' 'आत्महत्या के विरुद्ध' 'हँसो हँसो जल्दी हँसो' तथा 'लोग भूल गये हैं'। 'आत्महत्या के विरुद्ध' नाटकीय एकालाप की कविता है।

'रामदास' कविता में रामदास नामक एक आम आदमी की हत्या की घटना के माध्यम से वर्तमान परिवेश में साधारण मनुष्य की असुरक्षित, लाचार-विवश जिंदगी का यथार्थ चित्र अंकित किया गया है। कानून और व्यवस्था के अंधेर का संकेत देती हुई कविता अपराधी तत्त्वों की बेरोक-टोक खौफ पैदा कर देने वाली क्रूरता को उभारती है। कविता में बहुत कम शब्दों में आतंक के घिनौने चेहरे को उजागर करते हुए तमाशा देखने वालों की नपुंसकता को भी बेनकाब किया गया है।

चौड़ी सड़क गली पतली थी
दिन का समय घनी बदली थी
रामदास उस दिन उदास था
अंत समय आ गया पास था
उसे बता यह दिया गया था उसकी हत्या होगी

धीरे धीरे चला अकेले
सोचा साथ किसी को ले ले
फिर रह गया, सड़क पर सब थे
सभी मौन थे सभी निहत्थे
सभी जानते थे यह उस दिन उसकी हत्या होगी

खड़ा हुआ वह बीच सड़क पर
दोनों हाथ पेट पर रखकर
सधे कदम रख करके आये
लोग सिमट कर आँख गड़ाये
लगे देखने उसको जिसकी तय थी हत्या होगी

निकल गली से तब हत्यारा
आया उसने नाम पुकारा
हाथ तौलकर चाकू मारा
छूटा लोहू का फ़व्वारा
कहा नहीं था उसने आख़िर उसकी हत्या होगी

भीड़ ठेलकर लौट गया वह
मरा पड़ा है रामदास यह
देखो देखो बार बार कह
लोग निडर उस जगह खड़े रह
लगे बुलाने उन्हें जिन्हें संशय था हत्या होगी।

शब्दार्थ-टिप्पणी

घनी सघन **निहत्था** बिना हथियार के **लोहू** खून

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) रामदास की उदासी का क्या कारण था ?

(2) हत्यारा कहाँ से आया और उसने कैसे रामदास की हत्या की ?

(3) लोग निडर होकर किन्हें बुला रहे थे ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) 'रामदास' का प्रतीकार्थ स्पष्ट कीजिए।

(2) हत्यारे के सुरक्षित लौट जाने के क्या कारण हैं ?

योग्यता-विस्तार

- 'रामदास' कविता के आधार पर समकालीन समाज में आम आदमी की असुरक्षा पर एक निबंध लिखिए।

•

24 गंगा : देश की प्राण नाड़ी

विद्यानिवास मिश्र

(जन्म : सन् 1926 इ., निधन :सन् 2005 ई.)

विद्यानिवास मिश्र का जन्म गोरखपुर के पकड़ड़ीहा गाँव में हुआ था। वे संस्कृत और हिन्दी दोनों भाषाओं के मर्मज्ञ थे। वे संपूर्णानंद संस्कृत विश्व विद्यालय, वाराणसी के कुलपति भी रहे।भाषा विज्ञान और व्याकरण के पंडित थे। परंपरा और आधुनिकता दोनों को उन्होंने आत्मसात् किया था।

मिश्रजी ललित निबंधकार के रूप में सविशेष जाने जाते हैं। सांस्कृतिक विरासत के प्रति अहोभाव, लोकजीवन में आस्था और गहरी मानवतावादी दृष्टि उनके निबंधों की विशेषता है। वे संस्कृत शब्द संपदा के साथ लोकजीवन में प्रचलित देशज शब्दों एवं भोजपुरी कहावतों का ऐसा ताना-बाना बुनते हैं कि भाषा का प्रवाह भी बराबर बना रहते हैं। छितवन की छाँह, बनजारा मन, मेरे राम का मुकुट भीग रहा है, शेफाली झर रही है, आँगन का पंक्षी, कँटीले तारों के आरपार, परंपरा बंधन नहीं आदि उनकी प्रमुख निबंध रचनाएँ हैं। उन्हें 'महाभारत का काव्यार्थ' पर मूर्तिदेवी पुरस्कार, बिड़ला फाउन्डेशन से 'शंकर सम्मान' एवं 'पद्मश्री' सम्मान प्राप्त हुआ था।

प्रस्तुत निबंध में लेखक ने पर्यावरण की सुरक्षा को हमारे जीवन का प्राण-प्रश्न बतलाया है। उनके विचार से गंगा हमारी एक प्राकृतिक धरोहर तो है ही हमारी धार्मिक और सांस्कृतिक चेतना का महत्त्वपूर्ण स्त्रोत भी है। हमारी आस्था का केन्द्र है। लेखक का मानना है कि गंगा की सफाई के लिए प्रयत्न तो अनेक हुए किंतु वे पर्याप्त नहीं हैं। सिर्फ बातों से काम नहीं चलेगा, सच्चे मन, सच्ची लगन से दृढ़ संकल्प के साथ समाज और शासन को मिलकर काम करना होगा। शहरीकरण और औद्योगीकरण संबंधी दूषणों को दूर करने के लिए ठोस योजना के तहत गंगा की निर्मलता-पवित्रता को पुन:कायम करना होगा। गंगा हमारे देश की प्राण-नाड़ी है, शुद्ध-पवित्र जल का संचार ही उसे स्वस्थ बना सकता है।

हमारे योजनाप्रेमी देश में पर्यावरण की रक्षा की योजना बहुत पहले ही बननी शुरू हो गयी, स्टाकहोम सम्मेलन में आज से दशक से अधिक पूर्व भारत की तत्कालीन प्रधानमंत्री ने पर्यावरण-रक्षा की चेतना की बात उठायी थी और विकसित देशों से माँग की थी कि वे अपने बाहर के विश्व के पर्यावरण की भी चिन्ता करें। इसी क्रम में कई आन्दोलन हुए, चिपको आन्दोलन ने हिमालय के बनों की रक्षा की बात की, उसको अखबारी समर्थन मिला। केरल में शान्त घाटी(साइलेंट वैली) की रक्षा के लिए आन्दोलन चला, केन्द्रीय सरकार ने वहाँ हस्तक्षेप किया। प्रकृति में सन्तुलन बनाए रखने के लिए कितने अरण्य अभ्यारण्य घोषित हुए। अंत में गंगा की रक्षा के लिए एक समग्र योजना की घोषणा की गयी। कुछ महत्वपूर्ण स्थानों पर गंगा के जल की शुचिता बनाये रखने के लिए उसमें गिरने वाले दूषित पदार्थों के निस्तारण की वैकल्पिक व्यवस्था के लिए कुछ करोड़ में रुपये खर्च हुए पर अभी तक मेरे जैसे साधारण आदमी की दृष्टि में गुणात्मक परिवर्तन दिखायी नहीं पड़ता।

मैंने इस समस्या पर गहराई से सोचा, कई बार मन में यह भी संकल्प हुआ कि गंगा भारत की प्राणनाड़ी है इसके लिए जीवन उत्सर्ग करना पड़े तो करना चाहिए, केवल कागज़ी चेतना से काम नहीं चलेगा। एक समूह तैयार करना होगा जो गंगा के और उसमें मिलने वाली नदियों के स्त्रोत से ही मनुष्य की धन-लोलुप्ता और भविष्य के प्रति अचेतनता के कारण जो कुछ विनाशकारी कार्य हो रहे हैं, इनको रोकने के लिए धरने का कार्यक्रम चलाना चाहिए। यह भी सोचा कि कई ऐसे मुद्दे हैं जो वर्तमान पर्यावरण विधियों के अधीन भी सर्वोच्च न्यायालय में सार्वजनिक हित में उठाए जा सकते हैं, इसके लिए स्वयंसेवी विधि विशेषज्ञों की टोली तैयार करनी चाहिए। काशी में एक संस्था है, उसको भी गतिशील बनाने की बात सोची। परन्तु अभी कुछ भी हो न सका। उसके कारण कई हैं, पर सबसे बड़ा कारण यह है कि हमारा जातीय मन कहीं मर रहा है, गंगा के लिए हम बौद्धिक स्तर पर सोचते हैं और तब ऋण-धन का हिसाब लगाते हैं, गंगा को निर्मल बनाने की बात सोचते हैं मानो गंगा केवल भौतिक पदार्थ हो, इतने बड़े देश की हज़ार-हज़ार वर्षों की साधना, तपस्या और भावना के सूक्ष्म कणों से बनी हुई गंगा की सूक्ष्म शक्ति का जैसे कोई महत्व न हो। हम अपने मन को निर्मल बनाने की बात नहीं सोचते कि कहीं नदियों, पर्वतों, वनों, निर्झरों के प्रति हमारा भाव कुछ गंदला हो गया है, हम इन्हें अपनी ऊर्जा के स्त्रोत के रूप में या अपनी निरन्तरता, अपनी ऊर्ध्वगामिता और अपनी समष्टि चेतना का साकार शिखर न मानकर इन्हें सम्पदा के रूप में उपभोग्य वस्तु के रूप में विहार-साधन के रूप में देखने लगे हैं। ऐसा ही मन हिसाब लगता है कि गंगा में दूषित जल रासायनिक प्रक्रिया से शुद्ध किया जाय और उसका कचरा औद्योगिक उपयोग में लाया जाय, जिससे कचरा भी एक कमाऊ उद्योग बन जाय। यह सोच बहुत ही खतरनाक है, क्योंकि तब

फिर गंगा की चिन्ता भूल जायेंगी, बस कचरे के उत्पादन की चिन्ता प्रमुख हो जायेगी। यह सब हम इसीलिए सोचते हैं कि हम बुद्धिवादी जाल में फँसे हुए हैं कि गंगा एक नदी है, जड़ पदार्थ है, संयोग से उसमें हिमालय की औषधियों की जड़ों का कुछ रस जाता है, कुछ और रासायनिक प्रक्रियाएँ होती हैं, उसकी धारा में आत्मशोध शक्ति अनुपात में दूसरी नदियों से ज्यादा है। वह सिंचाई का साधन है और पुरातत्व का ही प्रमाण लें, कम से कम 8000 वर्षों से वह बहुत बड़े भू-भाग की उर्वरता बनाए हुए है, अपने जल से, अपनी मिट्टी से, हम इतना सोच सकते हैं कि इस सम्पदा के दोहन पर ऐसा नियंत्रण लगायें की सम्पदा चुक न पाये, पर हम यही नहीं सोच सकते कि गंगा सम्पदा ही नहीं कुछ और भी है।

वह गंगा क्या है, इसे समझने के लिए एक ऐसा मन चाहिए जो इतिहास से अधिक पुराण को विश्वसनीय मानता है, वह समग्र दृष्टि से मनुष्य और प्रकृति को एक दूसरे में ओतप्रोत देखता है, वह मानवीय रिश्तों में प्रकृति को आबद्ध करता है। वह रहीम की तरह कहीं पैदा हो, किसी मज़हब में पैदा हो सोचता है, गंगा तो विराट् नारायण भाव की सेवा और तप का पिघलन है, जिसे ब्रह्मा का ज्ञान कमंडल नहीं संभाल पाता, जिसे शिव का जटाजूट भी नहीं रोक पाता, सेवा और तप से पिघला हुआ पदार्थ असंख्य-असंख्य चरअचर जीवों को तारने और सन्तप्त करने के लिए उमड़ पड़ता है। हिमालय की जटों की लट सरीखी पर्वत श्रेणियाँ इस पिघली धारा को रोक नहीं पातीं, हिमालय की जमी हुई शीतलता और आकाश-चुम्बी गरिमा नहीं रोक पाती, वह शिखरों की ऊँचाई का आकर्षण, देवदारु वनों से गुजरती हुई सुरभित बयार नहीं रोक पाती, वह देवताओं के बीच में जनमी, पली देवताओं के रोके नहीं रुकती, स्वयं एक महान् देश की महादेवता बन जाती है क्योंकि वह इस देश का सामान्य धर्म बन जाती है, जियो दूसरों के लिए जियो, दूसरों को लेकर जियो।

रहीम यह कह सकते थे---

अच्युत चरण तंरगिनी हरसिर मालतिमाल।
हरि न बनायो सुरसरि कीजै इन्दव भाल॥

तुम विष्णु के चरणों की द्रव हो, उन्हीं चरणों से निकली हो, तुम शिव के शिर में गुंथी हुई मालती की माला हो, तुम्हारे किनारे शरीर छूटेगा तो एक न एक तो होना ही है, शिवरूप हों या विष्णु रूप पर माँ तुम शिवरूप देना विष्णुरूप नहीं। तुम सिर पर विराजना। ऐसे मनवाला आदमी गंगा में पैर रखने के पहले, जल माथे लगाता है, बड़े ही विनम्र समर्पित भाव से जल में प्रवेश करता है, केलि के लिए नहीं, निमज्जन के लिए, अपने शरीर के मल छुड़ाने के लिए नहीं, स्नान के सुख के लिए नहीं, मन की पवित्रता के लिए, ऐसी पवित्रता के लिए, जिसमें सबका हित अपना होता है, "सुरसरि सम सब कर हित होहू"।

ऐसी पवित्रता से एकाकार होना ही गंगा-स्नान का लक्ष्य है। गंगा के पास आदमी आता है अपनी आपूर्ति पाने के लिए , गंगा सब अधूरापन अपने बहाव से पूरा कर देती है, गंगा एक अनविच्छन्न आहुति का आमंत्रण है, यह जीवन लोक के लिए अर्पित होने के लिए, इसी में अधूरे जीवन की पूर्ति है, यही सबसे बड़ा साकल्य है।

ऐसा मन जीवन के अन्तिम क्षण में द्विजेन्द्रलाल राय की तरह सोचता है कि उस क्षण में माँ तुम्हारे जल का कलरव कानों को भरे, तुम्हारे जल के छींटे रोमांच बन जायें, तुम्हारा जल आँखों का जुड़ाव बन जाय, तुम्हारे स्पर्श से पुलकित हवा मेरे प्राणों की प्राण बन जाय, बस वह क्षण जीवन का साकल्य बन जायेगा। ऐसा मन दुर्भाग्य से मेरा भी है और असंख्य ऐसे लोगों का है जिनके पास तथाकथित समझदारी का भाव नहीं है।

ऐसे ही मन से कुछ प्रश्न उठाना चाहता हूँ, इनका उत्तर हमें चाहिए। पहला प्रश्न यह है कि गंगा की मुख्य धारा इसलिए है कि उसमें संवहन-क्षमता है (कैरीइंग पॉवर), यह क्षमता कम करने का अधिकार किसी को नहीं होना चाहिए, अत: जितना जलसंभार मिलता रहा है, उतना लोगों को मिलते रहना चाहिए, पर ऐसा नहीं हो रहा है। विगत बीस वर्षों में गंगा का जलसंभार प्रयाग,काशी जैसे स्थानों में काफी घटता रहा है। इस तटवासियों के जलाधिकार को कौन सुरक्षित करेगा? क्या इसके लिए सार्वजनिक हित का मुद्दा सर्वोच्च न्यायालय में नहीं उठाया जाना चाहिए?

दूसरा प्रश्न यह है कि औद्योगिक कचरा डालने वाले उपक्रमों पर कार्रवाई में शिथिलता क्यों है, पर्यावरण कानून इतना कड़ा क्यों नहीं है कि इसका उल्लंघन गम्भीर सार्वजनिक अपराध माना जाय। उद्योगपतियों की अभिसन्धि का ही फल है कि कागज़ की आवश्यकता की वृद्धि के नाम पर रसशोषक पेड़ों की बढ़ती हो रही है जो पृथ्वी को कुछ देते नहीं और उल्टे भूगर्भ का जल खींच लेते हैं और कागज बनाने के लिए उपयुक्त रसायनों के कचरों से नदियाँ दूषित हो रही हैं, तापी, सोन, नर्मदा का जल देखा नहीं जाता। इन्हीं उद्योगपतियों की लोभलोलुप्ता के कारण रासायनिक कचरे के निस्तारण की केवल कागज़ी कार्रवाई होती है, कोई प्रभावी कदम नहीं उठाया गया है। इस समस्या के समाधान के लिए सर्वोच्च न्यायालय ने नोटिसें जारी की हैं, पर अभी तक कोई प्रतिफल दिखायी नहीं पड़ा है।

तीसरा प्रश्न महानगरों की दूषित मल-प्रणालियों के निस्तारण से सम्बद्ध है। वाराणसी में कहा गया है कि मलजल को अन्यत्र ले जाकर संशोधित किया जायगा, पर अन्तरिम काल में पंप से नालियों का जल निकालकर ऊपर फेंका जायेगा, नदी में जाने से रोका जायेगा। वास्तविकता यह है कि न तो पंप बारहों महीने काम करते हैं, न दूषित जल का गिरना रुका है। एक समय था कि काशी के भीतर निपटते तक नहीं थे, अशुचि वस्त्र पहनकर जल में प्रवेश नहीं करते थे, गंगा के किनारे कहीं भी साबुन लगाने वाले दिखते थे तो उनकी बड़ी फजीहत होती थी। आज घाट सभी धोबीघाट हो गये हैं और महानगरों के सीमा से अधिक विस्तार से पुरानी दूषित जलप्रणालियां अवरुद्ध होने लगी हैं, इतना प्रदूषण का संचार है और जल का संचार निरन्तर क्षीणप्राण है। नदी की गहराई पेड़ों के कटने से सिल्ट के भराव से कम होती जा रही है, जंगलों के नाश से हिमालय की वनौषधियों के सर्वनाश के कारण औषधियों का शोधक रस भी नहीं मिल रहा है। हम यह अनुभव नहीं कर पा रहे हैं, कि कैसी घुटन में है हमारी जातीय जीवन धारा। हम सतही उपाय कर रहे हैं, उसमें भी विलम्ब लगा रहे हैं। अकेले शासन के भरोसे कैसे रहा जाय। शासन के लिए गंगा की समग्रता का कोई महत्व नहीं है, वह सांस्कृतिक स्मृति मात्र है। वह जीवन की प्रत्यक्ष अपरिहार्यता नहीं है। होगी भी नहीं जब तक शासन को चुनने वाला सचेत नहीं है।

गांधीजीकी राजनीति के उत्तराधिकारियों को तो अपनी पूरी आर्थिक-सांस्कृतिक नीति ही ऐसी रखनी चाहिए थी जो यूरोप की ग्रीन पार्टियों के समकक्ष होती, पर अब उपभोक्ता अपसंस्कृति के इस तरह फैल जाने के बाद आवश्यकता है कि एक ग्रीन पार्टी जैसी भारतीय आवश्यकताओं और भावनाओं के अनुरूप पार्टी बने, जो सत्तासीन होने के लिए नहीं सत्तासीनों को बड़ी सजगता से खबर लेने के उद्‌देश्य से बने और सम्पूर्ण जीवन की सुरक्षा का नारा उठाये, अलग-अलग टुकड़ों में अभयारण्य न बनाये, इस समय सम्पूर्ण जीवन विनाश के भय से, ग्रस्त है केवल गंगा ही नहीं, यह भाव लाने वाली राजनीतिक चेतना उत्पन्न करना जरूरी हो गया है। तभी कुछ कारगर कदम सरकारें उठायेंगी और लोग उठायेंगे।

शब्दार्थ-टिप्पणी

निस्तारण काम की पूर्ति **मजहब** धर्म **पिघलन** पिघलना **सन्तप्त** दु:खी **ऊर्ध्वगामिता** ऊपर की ओर जाना **मलजल** मैलाजल **अभयारण्य** जानवरों को भय रहित रहने का, जीने का वन

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) नदियों-पर्वतों के प्रति हमारा भाव कैसा हो गया है ?
(2) गंगा को समझने के लिए कैसा मन होना चाहिए ? कैसे समझेंगे ?
(3) गंगा के प्रति हमारा कैसा भाव है ?
(4) लोग अपने जीवन का साफल्य किसमें मानते हैं ?
(5) पर्यावरण कानून क्यों कड़ा बनाना चाहिए ?
(6) नदियाँ क्यों दूषित हो रही हैं ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) मानवजीवन में गंगा का महत्त्व क्या है ?
(2) गंगाघाटों की आज की स्थिति का वर्णन कीजिए।
(3) शासन के लिए गंगा का क्या महत्त्व होना चाहिए ?
(4) गंगा में प्रदूषण रोकने के लिए हमें क्या करना चाहिए ?
(5) 'गंगा संपदा नहीं कुछ और भी है'- समझाइए।
(6) 'गंगा हमारी प्राण नाड़ी' शीर्षक की सार्थकता समझाइए।

योग्यता-विस्तार

- 'मानवजीवन एवं हमारी संस्कृति में गंगा का महत्त्व'-विषय पर चर्चा कीजिए।

•

25 गुठली आम की

रंजना जायसवाल

(जन्म : सन् 1968 ई.)

रंजना जायसवाल का जन्म उत्तरप्रदेश के पड़रौना नामक गाँव में हुआ था। उन्होंने कविता और कहानी के साथ-साथ निबंध भी लिखे हैं। उनके कविता संग्रहों में 'मछलियाँ देखती सपने', 'दुख पतंग', 'जिंदगी के कागज पर', 'माया नहीं मनुष्य', 'जब मैं स्त्री हूँ', प्रमुख हैं।

'तुम्हें कुछ कहना है भर्तुहरि' उनका कहानी संग्रह है। 'स्त्री और सेन्सेक्स' उनके निबंधों का संकलन है। उन्हें 'भारतीय दलित साहित्य अकादमी' पुरस्कार प्राप्त है।

प्रस्तुत कविता में आम की गुठली की सृजन-क्षमता के माध्यम से जीवन के प्रति आशावादी दृष्टि का संकेत दिया है। घूरे की सूखी जमीन पर पड़ी आम की गुठली अपने कुनबे के स्वर्णिम अतीत को याद कर रही है। एक-के-बाद एक पूरे कुनबे को बिखरते भी उसने देखा है। वह अकेली बच गई किंतु उसे भी जबरन पकाकर, उसका रस चूस कर फेंक दिया गया। फिर भी वह निराश नहीं है। उसे इंतजार है बादलों का, वर्षा की बूँदों का। उसे विश्वास है उसमें फिर से अंकुर फूटेगा, वह फिर से वृक्ष बनेगी। फिर से उसका कुनबा महकेगा। गुठली के माध्यम से कवयित्री ने स्त्री-सृजन के प्रति अपनी आस्था प्रकट की है।

घूरे की सूखी ज़मीन पर पड़ी
गुठली आम की
याद कर रही है अपना अतीत
जब वह पिता के कन्धे पर चढ़ी
पूरे कुनबे के साथ
मह-मह महका करती थी
मगर कभी आँधी
कभी बन्दर
कभी शैतान बच्चों के कारण
टूटता गया कुनबा
उसकी अनगिनत बहनें
बचपन में ही नष्ट हो गयीं
और अनगिनत जवानी में ही।
काट-पीटकर
मिर्च मसालों के साथ मर्तवानों में बन्द कर दी गयीं
वह बची रह गयी।
कुछ के साथ
पर कहाँ जी पायी पूरा जीवन
भुसौले में दबा-दबाकर
दवा के जोर पर
जबरन पैदा किया गया उसमें रस
और फिर चूसकर उसका सत्व
फेंक दिया गया घूरे पर
निराश नहीं है फिर भी गुठली
उसमें है सृजन की क्षमता
इन्तजार है उसे
बादलों का
फिर फूटेगा उसमें अंकुर और वह वृक्ष बन जाएगी।

शब्दार्थ-टिप्पणी

कुनबा परिवार **भुसौला** भूसा रखने की जगह, वह स्थान जहाँ कच्चे आमों को पकाने रखा जाता है **मर्तमान** चीनी मिट्टी का बर्तन, अचारदान

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) आम की गुठली कहाँ पड़ी थी ?
(2) गुठली का पिता कौन है ?
(3) बचपन में उसकी बहिनें कैसे नष्ट हो गई थीं ?
(4) घूरे पर फेंकने पर भी गुठली निराश क्यों नहीं है ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) आम की गुठली अतीत की किन-किन बातों को याद करती है ?
(2) 'आम की गुठली' किसका प्रतीक है ?
(3) गुठली के माध्यम से नारी जीवन की विषमता का वर्णन किया गया है, समझाइए।

योग्यता-विस्तार

- कविता के माध्यम से वर्तमान समाज में नारी की स्थिति और पीड़ा पर एक निबंध लिखिए।

●

26 ओ लाल आफताब!

फणीश्वर नाथ 'रेणु'

(जन्म : सन् 1921 ई.; निधन : सन् 1977 ई.)

शीर्षथ आँचलिक कथाकार रेणुजी का जन्म बिहार के पूर्णिया जिले के औराही-हिंगना गाँव में हुआ था। उनकी प्रारंभिक शिक्षा गाँव में हुई और उच्च शिक्षा वाराणसी में। उन्होंने भारत एवं नेपाल के स्वाधीनता संग्राम में सक्रिय भूमिका निभाई। लोकनायक जयप्रकाश नारायण के जन-आंदोलन में भी उनकी भूमिका अहम् रही। उन्हें पद्मश्री सम्मान प्राप्त हुआ था।

रेणु ने भारतीय ग्राम-जीवन को बहुत निकट से देखा था। गरीबी और भुखमरी को वे सबसे बड़ी बीमारी मानते हैं। उन्होंने भारतीय ग्राम जीवन को उसकी समग्रता में चित्रित किया है।उनके कथा साहित्य में लोकजीवन और लोक संस्कृति का लोक भाषा के माध्यम से अर्थपूर्ण आलेखन हुआ है। 'मैला आँचल' और ' परती परिकथा' प्रमुख उपन्यास हैं। 'ठुमरी','एक आदिम रात्रि की महक','अग्निखोर' एवं 'एक श्रावणी दोपहरी की धूप' उनके कहानी संग्रह हैं। 'ऋणजल-धनजल', 'नेपाली क्रांति कथा' तथा 'समय की शिला पर' रिपोर्ताज संग्रह हैं। 'मैला आँचल', एक सर्वश्रेष्ठ आँचलिक उपन्यास माना गया है।

प्रस्तुत गद्य-गीत में लेखक 9 अगस्त 1942 के 'भारत छोड़ो आंदोलन' के अंतर्गत 'करो या मरो' के नारे के साथ शहीद होने वालों को पुन: एक बार याद करता हुआ उस दिन के सूरज को वंदन करता है। वह उस लाल आफताब से भारत के लोगों में फिर से क्रांति की वही शक्ति और साहस भरने को कहता है। आजादी के कुछ ही वर्षों बाद लोगों का मोहभंग हो गया, उनके सपने बिखर गए। गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी और भ्रष्टाचार से सारा देश आक्रांत है। इस दुर्दशा में घुट-घुट कर मरने से कुछ करके मरजाना ही अच्छा है। लेखक के विचार से करो या मरो के मंत्र को फिर दोहराना होगा। मुट्ठीभर लोगों को स्वराज का सुख मिला, यह सुराज नहीं है। अत: स्वतंत्रता संग्राम के तमाम शहीदों का स्मरण कर इंकलाब के आफताब की साक्षी में पुन: एकबार जनक्रांति की अनिवार्यता का संदेश यहाँ दिया गया है। लेखक बगावत के प्रतीक सूरज से जन-क्रांति का वरदान माँगता है।

प्यारे 9 अगस्त! सलाम!

पूरब आसमान में उठते हुए, 9 अगस्त के लाल आफताब! तुम्हें भी सलाम!! अपनी किरणों में, हमारे लाखों-लाख शहीदों की उठती हुई जवानियों के तेज, हँसती हुई रंगीनियों के रंग समेटकर, आज तुम उग आये हो। शहीदों की समाधियों पर, फैली हुई हरियालियों पर, रात में सितारे ओस की माला चढ़ा गये हैं। उन मोतियों पर, तुम्हारी किरणों की छटा, विभिन्न रंगों की सृष्टि कर रही है। और उन रंगों को अपने प्राणों में घुलाने के लिए हमारी आत्मा आतुर हो उठती है। आज से सात वर्ष पहले, ऐसी ही आतुरता आत्मा में लगी थी।

याद है तुम्हारा वह रूप! ठीक इसी तरह 'उग'कर तुमने हमें सन्देश सुनाया था-' सदा शान्त हिमालय के विशाल हृदय को फोड़कर ज्वालामुखी भड़क उठा है। उठो! दिशाओं में 'करो या मरो' का महामन्त्र गूँज रहा है।'तुम्हारी प्रचण्ड किरणों ने हमें झकझोर कर जगा दिया था। और उस दिन हम जगे थे....

इन्कलाब के देवता! तुम साक्षी हो कि हम जगे थे। कोई यह नहीं कह सकता कि हिन्दुस्तानियों ने 'सप्ताश्व अरुण रथ' के झंकार को सुनकर भी अनसुना कर दिया था। कोई यह नहीं कह सकता कि हम अपने देवता की पुकार पर नहीं जगे थे। शिक्षा, सभ्यता, संस्कृति, ज्ञान-विज्ञान की श्रेष्ठता की डींग हाँकनेवाले राष्ट्रों ने अचरज-भरी निगाहों से हमें देखा था और हमारी 'क्रान्ति' की 'नवीन पद्धति' की सफलता ने उनकी आँखों में चकाचौंध डाल दिया था। हाँ, हम उस दिन जगे थे।

शक्ति के भण्डार 9 अगस्त! प्रकाश पुंज-प्यारे-लाल आफताब! हममें फिर वही शक्ति भरो, हमे फिर वही प्रकाश दो!!

प्यारे ध्रुव, तुम्हारे 'रक्तपर्व' का दिन है आज। ज़रा उठो, देखो-9 अगस्त फिर तुम्हारी समाधि पर फूल चढ़ाने आया है।

चिताओं, कब्रों,समाधियों में सोये हुए देवताओ! आज जन-जन के मन में फिर वैसी ही बेदारी भर दो कि अपमानित और लांछित होने से पहले वे अपनी गर्दन दे दें।

हमारे बाग़वानो! तुमहारे खून से सींचे हुए आजादी के पौधे और फूल के हम नये रखवाले हैं। विश्वास करो ! तुम्हारे लहू की लाली को लेकर जो कली खिली है वह कभी सूखकर झड़ नहीं सकती। हम प्रतिज्ञा करते हैं कि इस पर कभी किसी बेदर्द सैयाद की उँगलियाँ भी नहीं पड़ने देंगे। भगवान के मुकुट या माला में गूँथने के लिए भी यदि कोई इसे तोड़ना चाहेगा तो उसे निराश होना पड़ेगा।

और, आज जागो फिर से, करोड़ों करोड़ कब्रों में गड़े हुए जीवित नरकंकालो! वह पुण्य महीना, वह पवित्र सप्ताह, वह महान दिवस और वह अलौकिक क्षण, फिर उपस्थित हुआ है जिसने तुम्हारी सूखी हड्डियों और निस्पन्द तन्तुओं में

बिजलियाँ भर दी थीं।

आजाद भारत के गुलाम नर-नारियो! आओ, देखो! आज जलियाँवाले आये हैं, आज भगतसिंह आये हैं, जतीन्द्र आये हैं, खुदीराम आया है।

नौजवानो! सुनो! मौन दिवस भंग कर आज 'बापू' बोलनेवाले हैं। आज आसमान में फिर गूँजेगा महामन्त्र, पवित्र मन्त्र-'करो या मरो'!

'करो या मरो !'

फिर इसी मन्त्र को दुहराने की आवश्यकता है। क्योंकि 'सत्य' कहता है कि 'वादा' अधूरा ही है, 'अहिंसा' कहती है कि कुर्बानी में कमी रह गयी। हमें फिर से करना है, फिर से मरना है।

जेलों, सेलों और फाँसी के तख्तों से सन्देश लेकर जो अल्हड़ हवा आती है, वह कहती है कि 'सुनहरा सपना' पूरा नहीं हुआ है।

यह कैसा स्वप्न भंग है ? यह कैसी छलना है ? कलाइयों और पैरों में बेड़ियाँ मौजूद हैं। अपने अंग-अंग पर बन्धनों को देखकर हम कैसे विश्वास कर लें कि हम स्वतन्त्र हैं। विश्वास की बात तो दूर, कोई ऐसी कल्पना भी नहीं कर सकता। हमें विश्वास हो गया है, सुराज हुआ है जरूर, लेकिन वह हमारे लिए नहीं हुआ है। वह सुराज हुआ है बिड़लाओं के लिए, टाटाओं के लिए, डालमियाओं के लिए, देशी नरेशों और जमींदारों के लिए, भ्रष्टाचारियों के लिए। यह जनता का सुराज नहीं। महाभारत छिड़ा हुआ है, जनता का संघर्ष अभी जारी हैं। दरिद्रता, भूख और रोगों से मरनेवाले एक-एक प्राणी को आज हम 'शहीद' कहते हैं। क्योंकि दुश्मनों के इन अस्त्रों से जूझनेवाले, मरनेवाले वीरों को हम 'वर्ग संघर्ष' में लड़नेवाला सिपाही समझते हैं।

इस भ्रष्टाचार के आलम में घुल-घुलकर मरने से अच्छा है एक ही बार कुछ करना या करते-करते मर जाना। इसीलिए फिर से टटोलता हूँ अपनी बेड़ियों को!

किन्तु हम हिम्मत नहीं हारेंगे, हम विश्वास नहीं खोयेंगे। हमने देखा है क्रुद्ध जनसमुद्र के उत्ताल तरंगों को, जनशक्ति की प्रचण्ड ज्वाला को! हमने सुना है अपने महामानव के महाशंखनाद को!... हिमालय के विशाल हृदय को फोड़कर एक बार फिर आग भड़कना चाहती है, उसे कौन बुझावेगा? 'गंगा' फिर एक बार अपने पवित्र जल में लहू घोलने को मचल रही है, इसे कौन समझा सकता है ? आसमान पर चढ़कर 'न्याय' फिर बोलना चाहता है-इस संसार में कौन-सी ऐसी शक्ति है जो उसे चुप कर सके ?

सब्र का प्याला भरने को है, इस प्याले से छलककर एक बूँद भी गिरी कि दुनिया जलकर क्षार हो जायेगी!

प्यारे 9 अगस्त!

ये हैं शहींदों की विधवाएँ! इनकी सुधि के दीपकों के पवित्र प्रकाश को स्वीकार करो और इनकी खाली माँगों में सिन्दूर को आज फिर से हवा में बिखेर दो। ये हैं उनके बच्चे ! इन्हें एक बार दुलार दो ताकि यह आसमान से चाँद-खिलौना तोड़ ला सकें।

ये हैं उनकी वृद्धा मातायें-इनकी ज्यातिहीन आँखों में आज थोड़ी देर के लिए भी प्रकाश दे दो!

ये हैं उनके निस्सहाय पिता! इन्हें सहारा दो! और...यह है हमारी टोली, श्रमजीवी, सर्वहारा की टोली ! सैंकड़े 99 की टोली, दुखी-दरिद्रों का दल!.. इन्हें आदेश दो!

और.. वे हैं-हमारे मुँह से कौर छीननेवाले, अनाज चोर, काले बाजारवाले, भ्रष्टाचार के देवता, शोषण के आचार्य, अन्धकार के सम्राट, गरीबी के जनक, आजादी के शत्रु। दुनिया भटक जाय! धोखा खाये जाय! लेकिन तुम तो उनकी, छद्मवेष के अन्दर छिपी हुई, सूरतों की पहचानते हो'!

और..स्वर्ण सिंहासन पर बैठकर अपने मुल्क को भूल जानेवाले वे हैं- 8 अगस्त' 42 के उस ऐतिहासिक प्रस्ताव की धज्जियाँ उड़ानेवाले महापुरुष गण, जिन्होंने अँगरेजों को भगाने का बीड़ा उठाया था, वे आज अँगरेजों के चरण पर आजादी को पिर चढ़ाकर राष्ट्रध्वज तिरंगे के 'चक्र' के पास 'यूनियन जैक' की मनहूस रेखाएँ अंकित करवाने के लिए बेचैन हैं, वे हैं किसान-मजदूर राज्य स्थापित करने की प्रतिज्ञा करनेवाले, जिन्होंने 'ताकत' को अपनी बपौती सम्पति समझ ली है और जनसाधारण को पद-पद पर लांछित और अपमानित करके जनशकित को दबाने की नापाक हरकत कर रहे हैं।

- बगावत के प्रतीक! हमें बगावत का वरदान दो! हम इनके स्वर्ग में आग लगाना चाहते हैं, हम सच्चा स्वराज्य लाना चाहते हैं।

इन्कलाब के आफताब, तुम साक्षी रहना! कोई यह नहीं कह सके कि हमने..!

9 अगस्त! सलाम!

शब्दार्थ-टिप्पणी

आफ़ताब सूरज, सूर्य **आतुरता** घबराहट, व्यग्रता, व्यकुलता, शीघ्रता **प्रचन्ड** अत्यन्त, तीव्र, तेज, असह्य **झंकार** झनजन आवाज, झींगुर आदि के बोलने का शब्द **सभ्यता** सभ्य होने का भाव, किसी जाति अथवा राष्ट्र की वे सब बातें जो उसके सौजन्य और शिक्षित एवं उन्नत होने की सूचक होती हैं **संस्कृति** सुसंस्कारिता **डींग** शेखी लन्बी-चौड़ी बात **अचरज** आश्चर्य **लांछित** कलंकित जिसे दोष लगा हो **अलौकिक** स्थिरता, अचंचलता **निस्पन्द तंतु** स्थिर तार या धागा जो हिलता डुलता न हो **अल्हड़** मस्तमौला **भंग** भाँग **छलना** धोखा देना **सुराज** अच्छा या सुखद राज्य या शासन **टटोलना** ढूँढने के लिए इधर-उधर हाथ फैलाना **क्रुद्ध** क्रोधित **उत्ताल** उत्कट, तीव्र **सब्र** संतोष **निस्सहाय** जिसका कोई सहायक या मददगार न हो, **श्रमजीवी** मजदूरी करके जीविका चलाने वाला **कौर** ग्रास, उतना भोजन जितना एक बार में मुँह में डाला जाय **सम्राट** राजा **जनक** जन्मदाता, बाप, उत्पादक **छद्मवेश** बदला हुआ, कृत्रिम वेश **सिंहासन** राजा या देवता के बैठने का स्थान **मुल्क** देश, वतन **मनहूस** अशुभ, बुरा **बपौती** बाप से मिली हुई संपत्ति **लांछित** जिसे दोष या लांछन लगा हो

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) 9 अगस्त का आफ़ताब कैसा है ?

(2) इन्कलाब के देवता किसके साथी हैं ?

(3) लेखक के अनुसार हम कैसी प्रतिज्ञा करते हैं ?

(4) लेखक के अनुसार सुराज किसके लिए हुआ है ?

(5) लेखक अपनी बेड़ियों को फ़िर से क्यों टटोलता है ?

2. उत्तर लिखिए:

(1) लेखक ने बगावत का प्रतीक किसको और क्यों कहा है ?

(2) 'ओ लाल आफ़तब' निबंध में स्वतंत्र भारत की विडंबनाओं का चित्रण किया गया है, समझाइए।

(3) लेखक 'करो या मरो' के मंत्र द्वारा क्या कहना चाहते हैं ?

(4) जब हम जगे थे तब राष्ट्रों ने हमें किस नजर से देखा था ?

3. सप्रसंग व्याख्या कीजिए :

(1) "शक्ति के भण्डार 9 अगस्त! प्रकाश पुंज-प्यारे-लाल आफ़ताब! हममें फिर वही शक्ति भरो, हमें फिर वही प्रकाश दो"!!

(2) "बगावत के प्रतीक! हमें बगावत का वरदान दो! हम इनके स्वर्ग में आग लगाना चाहते हैं, हम सच्चा स्वराज लाना चाहते हैं।"

योग्यता- विस्तार

- स्वतंत्र भारत की स्मस्याओं पर लिखे गए किसी अन्य साहित्यकार के निबंध को ढूँढकर इस निबंध से तुलना कीजिए।

•

27 मकई के खेत में

निलय उपाध्याय

(जन्म: सन् 1963 ई.)

निलय उपाध्याय का जन्म बिहार के बक्सर जनपद के दुल्लहपुर गाँव में हुआ था। कवि और कथाकार के रूप में उनकी पहचान है। उनके प्रकाशित कविता संग्रह हैं– 'अकेला घर हुसैन का', और 'कटौती'। 'अभियान' और 'वैतरनी' उनके उपन्यास हैं।

प्रस्तुत कविता में मकई के खेत के तीन दृश्य-चित्र अंकित हैं। पहला चित्र आकाश में कुलांचें भर बरस रहे बादलों का है, जिनके स्वागत में मकई के नवजात पौधे सिर उठाये खड़े हैं। दूसरा चित्र बादलों और पौधों के बीच चल रहे कबड्डी के खेल का है जिसमें बादलों ने पौधों को धर दबोचा है। तीसरे दृश्य में पौधों ने बादलों को अंतिम साँस तक के लिए जकड़ लिया है। हवा साँस रोककर इस खेल को देख रही है। पृथ्वी की छाती में दूध उतर आया है।

---

(1)

बादल
कुलाँचें भर रहे हैं
आकाश का रंग काला हो रहा है
लहराता समुद्र
आ रहा है खेतों में,
हाथी के बच्चों की तरह
सूँड़ उठाए खड़े हैं
स्वागत में–
गूँफे खोलकर
मकई के नवजात पौधे।

(2)

आज फिर जमेगी
कबड्डी
मेघ संग
मकई के पौधों की,
हवा की पीठ पर पाँव रखकर
भागना ही चाहते थे कि
पकड़ लिया मेघों ने
पौधों को
छोड़ेंगे नहीं
साँस टूटने तक

(3)

गजब !
मकई के पौधों ने
पकड़ लिया है मेघों को
छोड़ेंगे नहीं
साँस टूटने तक।
हवा, साँस रोककर देख रही है
पेड़ पीठ ठोक रहे हैं
पृथ्वी के सीने में
दूध उतर गया है।

शब्दार्थ-टिप्पणी

मकई मक्का **कुलाँचें** छलांग, चौकड़ी **गूँफे** बाल खोलकर **नवजात** नये उत्पन्न **मेघ** बादल **कबड्डी** उत्तर भारत का विशेष खेल

मुहावरे

पीठ पर पाँव रखकर भागना सरपट भागना **पीठ ठोकना** हौसला बढ़ाना,बढ़ावा देना **सीने में दूध उतरना** मातृत्व का परिचय देना

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) बादल कहाँ कुलाँचें भर रहे हैं ?

(2) सूँड़ उठाए हाथी के बच्चों की तरह कौन खड़े हैं ?

(3) मेघों ने किसको पकड़ लिया है ?

(4) मकई के पौधों ने किसे पकड़ लिया है ?

(5) किसके सीने में दूध उतर आया है ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) मकई के पौधों का हाथी के बच्चों जैसा सूँड़ उठाने का आशय स्पष्ट कीजिए।

(2) हवा के साँस रोकने, पेड़ों के पीठ ठोकने, पृथ्वी के सीने में दूध उतर आने का अर्थ समझाइए।

योग्यता-विस्तार

- बादल और फसल के परस्पर संबंध पर एक निबंध लिखिए।
- प्रकृति और फसल के संबंध पर दो कविताएँ ढूँढ़कर पढ़िए।

•

28 खितीन बाबू

अज्ञेय

(जन्म : सन् 1911 ई.; निधन : सन् 1987 ई.)

अज्ञेय का जन्म उत्तरप्रदेश के देवरिया जिले के कसया गाँव के एक पुरातत्व शिविर में हुआ था। उनका पूरा नाम सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन था। आरंभ में वे विज्ञान के तेजस्वी छात्र रहे किंतु बाद में साहित्य से जुड़ गए। स्वाधीनता संग्राम की क्रांतिकारी गतिविधियों में भाग लेने के कारण उन्हें कई वर्ष जेल में बिताने पड़े। द्वितीय विश्वयुद्ध में सेना में भरती होकर असम-बर्मा सीमांत पर रहे। उन्होंने हिन्दी की कई प्रतिष्ठित पत्रिकाओं का संपादन किया। 'प्रतीक और दिनमान' मुख्य हैं।

अज्ञेय 'प्रयोगवाद' और 'नई कविता' के पुरस्कर्ता रहे। उन्होंने वस्तु और शिल्प दोनों में नये-नये प्रयोग किए। उन्होंने कई-कई बार देश-विदेश की यात्राएँ की और इस दौरान अनेक भाषाओं और दर्शनों का गहरा अध्ययन किया। साहित्य की सभी विधाओं में उन्होंने सृजन किया और हरविधा में नये प्रतिमान बनाए। 'तारसप्तक' का संपादन हिन्दी जगत की एक विशिष्ट घटना बनी। 'भग्नदूत', 'चिंता','हरीघास पर क्षणभर' 'आँगन के पारद्वार' और 'कितनी नावों में कितनी बार' उनके प्रमुख कविता संग्रह हैं। 'शेखर एक जीवनी','नदी के द्वीप' और 'अपने अपने अजनबी' उनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं। उनकी कहानियाँ 'अज्ञेय की कहानियाँ भाग-1तथा 2' में संकलित हैं। उन्होंने निबंध, यात्रावर्णन और समीक्षा के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण कार्य किया। उन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार तथा साहित्य अकादमी पुरस्कार भी प्राप्त हुआ।

प्रस्तुत कहानी में एक साधारण व्यक्ति के असाधारण व्यक्तित्व को व्यंजित किया गया है। खितीन बाबू के माध्यम से लेखक ने मनुष्य की जिजीविषा, जिंदादिली, और प्रतिकूल स्थितियों से हार न मानकर उनके बीच से रास्ता निकाल लेने की दृढ़ संकल्प शक्ति एवं अदम्य उत्साह को चित्रित किया है। चेचक ने चेहरे को कुरूप कर दिया, एक आँख चली गई और इसके बाद तो विभिन्न दुर्घटनाओं में एक के बाद एक सारे अंग-चले गये लेकिन फिर भी जिंदादिली के साथ हँसते-हँसते जीने वाला खितीन बाबू का चेहरा कभी भुलाया नहीं जा सकता। खितीन बाबू के चरित्र-चित्रण में लेखक ने अद्भुत कलात्मक्ता का परिचय दिया है।

वो चेहरे। कौन से चेहरे ? कौन सा चेहरा ? जो जीवनभर चेहरों की स्मृतियाँ संग्रह करता आया है, उसके लिए यह बहुत कठिन है कि किसी एक चेहरे को अलग निकालकर कह दे कि यह चेहरा मुझे नहीं भूलता; क्योंकि जिसने भी जो चेहरा वास्तव में देखा है, सचमुच देखा है, वह उसे भूल ही नहीं सकता-फिर वह चेहरा मनुष्य का न होकर चाहे पशु-पक्षी का ही क्यों न हो...युरापीय को हर हिन्दुस्तानी का चेहरा एक जान पड़ता है; हन्दुस्तानी को हर फिरंगी का चेहरा एक। मानव को सब पशु एक-से दीखते हैं। वह भी एक तरह का देखना ही है। लेकिन जिसने सचमुच कोई भी चेहरा देखा है, वह जानता है कि हर व्यक्ति अद्वितीय है, हर चेहरा स्मरणीय। सवाल यही है कि हम उसके विशिष्ट पहलू को देखने की आँखें रखते हों।

मैं भी जब किसी एक चेहरे पर ध्यान केन्द्रित करना चाहता हूँ तो और अनेक चेहरे सामने आकर उलाहना देते हैं "क्या हम नहीं ? क्या हमें तुम भूल गए हो ?"इनमें पुरुष हैं, स्त्रियाँ हैं, बच्चे हैं; इतर प्राणियों में घोड़े हैं; कुत्ते हैं, तोते हैं; एक गिलहरी है, जो मैंने पाली थी और मेरी जेब में रहती थी; एक मुनाल है, जो मेरी जोली से घायल होकर चीखता हुआ मीलों दौड़ा था; एक कुत्ता है, जो मेरी बीमारी में मेरे सिरहाने बैठकर आँसू गिराता था; एक टूटी चोंच और कटे पंख वाला कौआ है, जो मुलतान-जेल में मेरा दोस्त बना था और परकटे नाम से पुकारने पर आधा उड़ता और उचकता हुआ आकर हाजिर हो जाता था - कहाँ तक गिनाया जाए पेड़-पौंधों के हम चेहरे नहीं मानते, नहीं तो शायद वे भी सामने आ खड़े होते। कालिदास ने शकुन्तला के जाने पर रोती हुई वनस्पतियों का वर्णन किया है ?

"अपसृतपाण्डुपत्रा मुंचति अश्रु इव लता: ।"

मेरी सहानुभूति उतनी दूर तक शायद नहीं है, लेकिन चेहरों का मेरे पास यथेष्ट संग्रह है-सभी अद्वितीय, सभी स्मरणीय। अगर एक चुनता हूँ, तो किसी असाधारणत्व के लिए नहीं चुनता हूँ, एक अत्यन्त साधारण व्यक्ति का अत्यन्त साधारण चेहरा; क्योंकि यही तो मैं कहना चाहता हूँ- असाधारण ही स्मरणीय नहीं हैं, हर गुदड़ी में लाल हैं, जरा उसे लौटकर झाँकने का कष्ट तो करो।

वो चेहरे। वह एक चेहरा। खितीन बाबू का चेहरा न सुन्दर था, न असाधारण; न वह 'बड़े आदमी' ही थे- सादारण पढ़े-लिखे, साधारण क्लर्क। मैंने पहले-पहल उन्हें देखा, तो कोई देखने के लायक था! चेचक के दागों से भरे चेहरे पर एक आँख

गायब थी और एक बाँह भी नहीं थी–कोट की आस्तीन पिन लगाकर बदन के साथ जोड़ दी गई थी। पर खितीन बाबू की हँसी में एक विलक्षण खुलापन और ऋजुता थी इसलिए बाद में औरों से उनके बारे में पूछा, तो मालूम हुआ, आँख बचपन में चेचक के कारण जाती रही थी, बाँह पेड़ से गिरने पर टूट गई थी और कटवा देनी पड़ी। उनके हँसमुख और मिलनसार स्वभाव की सभी प्रशंसा करते थे।

मेरी उनसे भेंट अचानक एक मित्र के घर हो गई थी। मैं दौरे पर जानेवाला था, इसलिए दोस्तों से मिल रहा था। दो–तीन महीने घूम–घाम कर फिर आया; लेकिन खितीन बाबू के दर्शन कोई छः महीने बाद उन्हीं मित्र के यहाँ हुए– अबकी बार उनकी एक टाँग भी नहीं थी। रेलगाड़ी की दुर्घटना में टाँग कट जाने से वे अस्पताल में पड़े रहे थे, वहाँ से साखियों का उपयोग सीखकर बाहर निकले थे।

उनके लिए घटना पुरानी हो गई थी, मेरे लिए तो नई सूचना थी। मैं सहानुभूति भी प्रकट करना चाहता था; पर झिझक भी रहा था, क्योंकि किसी की असमर्थता की ओर इशारा भी उसे असमंजस में डाल देता है, कि उन्होंने स्वयं हाथ बढ़ाकर पुकारा, "आइए, आइए, आपको अपने नए आविष्कार की बात बतानी है।" उनसे हाथ मिलाते हुए समझ में आया कि एक अवयव के चले जाने से दूसरे की शक्ति कैसे दुगुनी हो जाती है। वैसे जोर की पकड़ जीवन में एक–आध बार ही किसी हाथ से पाई होगी। मैं बैठ ही रहा था कि वे बोले, "देखा आपने, कितना व्यर्थ बोझा आदमी ढोता चलता है ? मैंने टांसिल कटवाए थे, कोई कभी नहीं मालूम हुई, एपेंडिक्स कटवाई, कुछ नहीं गया, केवल उसका दर्द गया। भगवान औधड़दानी हैं न, सब कुछ पालतू देते हैं दो हाथ, दो कान, दो आँखें! अब जीभ तो एक है आप ही बताइए, आपको कभी स्वाद लेने के साधन की कमी मालूम हुई है ?''

मैं अवाक् उन्हें देखता रहा। पर उनकी हँसी सच्ची हँसी थी, और उनकी आँखों में जीवन का जो आनन्द चमक रहा था, उसमें कहीं अधूरेपन की पंगुता की झाई नहीं थी। उन्होंने शरीर के अवयवों के बारे में अपनी एक अद्‌भुत थ्योरी भी मुझे बताई थी, यह ठीक याद नहीं कि वह इसी दूसरी भेंट में या और किसी दूसरी बार, लेकिन थ्योरी मुझे याद है, उनका पूरा जीवन उसका प्रमाण रहा। वैसे शायद बताई होगी उन्होंने थोड़ी–थोड़ी करके दो–तीन किस्तो में।

तीसरी बार मैंने देखा, तो वे दूसरी बाँह भी खो चुके थे। मालूम हुआ कि रिक्शे से उतरते समय गिर गए थे, कोहनी टूट गई थी और फिर घाव दूषित हो गया, जिससे कोहनी से कुछ ऊपर बाँह काट दी गई। इस बार भी भेंट तो उन्हीं मित्र के यहाँ हुई, मगर उनकी बैठक में नहीं, उनके रसोईघर में। मित्र–पत्नी भोजन–बना रही थी और खितीन बाबू एक मूढ़े पर बैटे हुए बताते जा रहे थे कि कौन व्यंजन कैसे बनेगा। वे खाने के शौकीन तो थे ही, खिलाने का शौक उन्हें और भी अधिक था, और पाकविद्या के आचार्य थे। मेरे मित्र ने उनकी दावत की थी। दावत का उपलक्ष्य बताया नहीं गया था, लेकिन इस बार कई दिन तक उनकी स्थिति संकटापन्न रही थी। खितीन दा भी इस बात को समझ गए थे, तभी उन्होंने कहा–"दावत रही और तुम्हारे यहाँ ही रही, पर दूँगा मैं, और सब कुछ अपनी देखरेख में बनवाएँगे, बनवाएँगी गृहपत्नी, मगर विधान खितीन बाबू का होगा। मित्र ने यह बात सहर्ष मान ली थी। खितीन बाबू का उत्साह इतना था कि वही सबके लिए सहारा बन जाता था।"

मैं भी मूढ़ा लेकर उनके पास बैठ गया। निमंत्रण मुझे भी बाहर ही मिल चुका था। मैंने गृह–पत्नी से पूछा – "क्या बना रही हैं ?" और उन्होंने उत्तर दिया, "मैं क्या बना रही हूँ, बना तो खितीन दा रहे हैं।" इस पर खितीन दा बोले, "हाँ, मेरा छुआ हुआ आप खा तो लेंगे न ?" और ठहाका मारकर हँस दिए। उनका छुआ हुआ, जिनके दोनों हाथ नदारद! फिर बोले–"आपने भोजन–विलासी और शय्या –विलासी की कहानी सुनी है ?"

मैंने सुनी थी। वे सुनाने लगे। एक राजा के पास दो व्यक्ति नौकरी की तलाश में आए। पूछने पर एक ने कहा–"मैं भोजन विलासी हूँ।" यानी ? यानी राजा जो भोजन करेंगे, उसे पहले चखकर वह बताएगा कि भोजन राजा के योग्य है या नहीं। जाँच के लिए उसी दिन का भोजन लाया गया, थाली पास आते–न आते भोजन विलासी ने नाक बन्द करते हुए चिल्लाकर कहाँ– उ–हू–हूँ ले जाओ, इसमें से मुर्दे की बू आती है!" बहुत खोज करने पर मालूम हुआ जिस खेत के धान से राजा के लिए चावल आए थे, उसके किनारे के पेड़ में एक मरा हुआ पक्षी टंगा था! भोजन–विलासी को नौकरी मिल गई। शय्या–विलासी ने बताया कि वह राजा के बिछौने की परीक्षा करेगा। उसे शयन–कक्ष में ले जाया गया। मखमली गद्दे पर वह जरा बैठा ही था कि कमर पकड़कर चीखता हुआ उठ खड़ा हुआ, "अरे रे, मेरी तो पीठ में बल पड़ गया, क्या बिछाया है किसी ने!" सबने देखा कहीं कोई सलवट तक

न थी, सब गद्दे -वद्दे उठाकर झाड़े गए, कहीं कुछ नहीं था जो विलासी की कमर में चुभ सकता-पर हाँ, आखिर गद्दे के नीचे एक बाल पड़ा हुआ था। इस प्रकार शय्या-विलासी को भी नौकरी मिल गई।

कहानी सुनाकर खितीन बाबू बोले- " वह भी क्या जमाने थे!"

मित्र-पत्नी ने कहा-"आप उन दिनों होते,तो क्या बात होती न? "

खितीन दा ने कहा, "और नहीं तो क्या। मैं होता, तो राजा को दो नौकर थोड़े ही रखने पड़ते?"

मित्र-पत्नी ने मेरी और उन्मुख होकर कहा, "खितीन बाबू गाते भी बहुत सुन्दर हैं।"

खितीन दा फिर हँसे। बोले -"हाँ, हाँ, संगीत-विलासी की नौकरी भी मैं ही कर लेता न?"

चार बजे भोजन तैयार हुआ, हम आठ-दस आदमियों ने खाया। मेरे लिए स्मरणीय स्वादों में भोजन का स्वाद प्रधान नहीं हैं, फिर भी उस भोजन की याद अभी बनी है।

तब लगातार दो-चार दिन उनसे भेंट होती रही; पर उसके बाद मैंने खितीन बाबू को एक बार और देखा, एक लम्बी अवधि के बाद। और अबकी बार उनकी दूसरी टाँग भी मूल से गायब थी।

दोनों हाथ नहीं, दोनों टाँगे नहीं, एक आँख नहीं। टांसिल, एपेंडिक्स वगैरह तो जैसा वे स्वयं कहते, रूंगे में चढ़ा दी जा सकती हैं। केवल एक स्थाणु बैठक में गद्देदार मूढ़े पर बैठा था। घर तक वे एक विशेष पहिएदार कुर्सी में लाए गए थे, लेकिन वह कुर्सी कमरे में ले जाने में उन्हें आपत्ति थी; क्योंकि वह अपाहिजों की कुर्सी है। कुर्सी से उठाकर उन्हें भीतर ला बिठाया गया था, और यहाँ वे सहज भाव से बैठे थे मानो किसी स्वप्नाविष्ट चतुर मूर्तिकार ने पत्थर से मस्तक और कन्दे तो पूरे गढ़ दिए हों, बाकी स्तम्भ अछूता छोड़ दिया हो।

मैं चुपके से एक तरफ बैठ गया, वे कुछ बात कर रहे थे। उन्हें देखते हुए मुझे बचपन में आत्मा के सम्बन्ध में की गई अपनी बहसें याद आ गईं। आत्मा है, तो सारे शरीर में व्याप्त है, या किसी एक अंग में रहती है? अगर सारे शरीर में, तो अंग कट जाने पर क्या आत्मा भी उतनी ही कट जाती है? अगर एक अंग में, तो अंग कट जाने पर क्या होता है? अपनी थ्योरी याद आ गई, जिसमें इस पहेली को हल कर दिया गया था; कि जब कोई अंग कटता है, तो उसमें से आत्मा सिमटकर बाकी शरीर में आ जाती है, पंगु नहीं होती। यह थ्योरी कहाँ तक मान्य है, इस बहस में तो वैज्ञानिक पड़ें, पर उनको देखते हुए इनके बारे में जरूर इसकी सचाई मानो ज्वलन्त होकर सामने आ जाती थी, उनकी आत्मा न केवल पंगु नहीं थी, वरन् शरीर के अवयव जितने कम होते जाते थे उसमें आत्मा की कान्ति मानो उतनी बढ़ती जाती थी मानो व्यर्थ अंगों से सिमट-सिमट कर आत्मा बचे हुए शरीर में और धनी पुंजित होती जाती-सारे शरीर में भी नहीं, एक अकेली आँख में-प्रेतात्माओं से भरे हुए विशाल शून्य में निष्कम्प दिपते हुए एक आकाश-दीप के समान...

तभी खितीन बाबू ने मुझे देखा। छूटते ही बोले ''बोले छिलाम, बेचे थाक्ते बेशि किछु लोग न!'' (मैंने कहा था, बचे रहने के लिए ज्यादा कुछ नहीं चाहिए!) और हँस दिए।

इसके बाद मैंने फिर खितीन बाबू को नहीं देखा। कहानी की पूर्णता के लिए एक बार और देखना चाहिए था; पर मैं कहानी नहीं सुना रहा, सच्ची बात सुना रहा हूँ। तो मैंने उन्हें फिर नहीं देखा। लेकिन सुनने वाले की कमी में कहानी नहीं रुकती। देखने वाला न होने से जीवन-नाटक नहीं हो जाता। मैंने भी सुनकर ही जाना; खितीन बाबू की कहानी अपने चरम उत्कर्ष तक पहुँचकर ही पूरी हुई; टहलने ले जाते समय उनकी पहिएदार कुर्सी एक मोटर ठेले से टकरा गई थी, वे नीचे आ गए और गाड़ी का पहिया उनके कन्धे के ऊपर से चला गया- बाँह का जो ठूँठ बचा हुआ था, उसे भी चूर करता हुआ। वे अस्पताल ले जाए गए, ढूँढ अलग की गई और कन्धे की पट्टी हुई; ओपरेशन के बाद उन्हें होश रहा और उन्होंने पूछा कि कन्धा है या नहीं? फिर कहा, "जाना गेलो ऐटा छाडाओ चले!" (मालूम हो गया कि इसके बिना भी चल सकता है!) लेकिन अबकी बार यह चलना अधिक देर तक नहीं हुआ; अस्पताल से वे नहीं निकले। शरीर में विष फैल गया और भोर में अनजाने में उनकी मृत्यु हो गई।

खितीन बाबू: एक सादारण क्लर्क : साधारण दुर्घटना : मृत्यु हो गई लेकिन क्या सचमुच? अब भी उन्हें देख सकता हूँ। कभी लगता है कि जिसे देखता हूँ वह केवल अंगहीन ही नहीं है, मानो अशरीरी ही हैं; केवल एक दीप्ति अंगों से क्या? अवयवों से क्या? जाना गेलो एटा छटाओ चले इस सबके बिना काम चल सकता है। केवल दीप्ति केवल संकल्प शक्ति। रोटी, कपड़ा, आसरा, हम चिल्लाते हैं, ये सब जरूरी हैं, निस्सन्देह जीवन के एक स्तर पर ये सब निहायत जरूरी हैं लेकिन मानवजीवन की मौलिक प्रतिज्ञा ये नहीं हैं; वह है केवल मानव का अदम्य अटूट संकल्प...

शब्दार्थ-टिप्पणी

फिरंगी अंग्रेज **अद्वितीय** जिसके जैसा दूसरा नहीं **यथेष्ट** पर्याप्त **गुदड़ी** फटे-पुराने कपड़े सिलकर बना बिछावन **क्लर्क** बाबू **अवयव** अंग **आस्तीन** बाँह को ढकने वाला कपड़ा **पंगु** विकलांग **पाकविद्या** भोजन पकाने की कला **संकटापन्न** संकट से घिरा हुआ **विधान** तरीका **सलवट** मोड़ **निष्कंप** बिना काँपे **आसरा** सहारा

स्वाध्याय

1. उत्तर दीजिए :

(1) हिन्दुस्तानी को हर फिरंगी का चेहरा कैसा लगता है ?

(2) मनुष्य के अतिरिक्त कहानीकार का संबंध किन-किन प्राणियों से है ?

(3) खितीन बाबू के कौन-कौन से अंग नहीं थे ?

(4) खितीन बाबू किस विद्या के आचार्य थे ?

(5) मानव-जीवन की मौलिक प्रतिज्ञा क्या होनी चाहिए ?

2. उत्तर लिखिए :

(1) खितीन बाबू का चेहरा कैसा था ?

(2) 'गुदड़ी के लाल' का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

(3) खितीन बाबू की मृत्यु कैसे हुई ?

(4) अपंग होने पर भी खितीन बाबू में अधूरापन क्यों था ?

(5) खितीन बाबू का चरित्र-चित्रण कीजिए।

(6) भोजन-विलासी और शय्या-विलासी का अंतर स्पष्ट कीजिए।

3. ससंदर्भ व्याख्या कीजिए :

(1) 'मैं अवाक् उन्हें देखता रहा। पर उनकी हँसी सच्ची थी। और उनकी आंखों में जीवन का जो आनंद चमक रहा था, उसमें कहीं अधूरेपन की पंगुता की झाईं नहीं थी'

योग्यता- विस्तार

- कहानी में प्रयुक्त बंगाली वाक्यों को पहचानकर उनका अर्थ लिखिए।

•

साहित्यशास्त्र

साहित्य हमारे जीवन के विविध रूप प्रस्तुत करता है। जिस तरह जीवन में विविधता है उसी तरह साहित्य में भी। साहित्य के विविध प्रकारों को हम साहित्य की विधाएँ कहते हैं।

साहित्य के मुख्य भेदोपभेद इस प्रकार हैं:

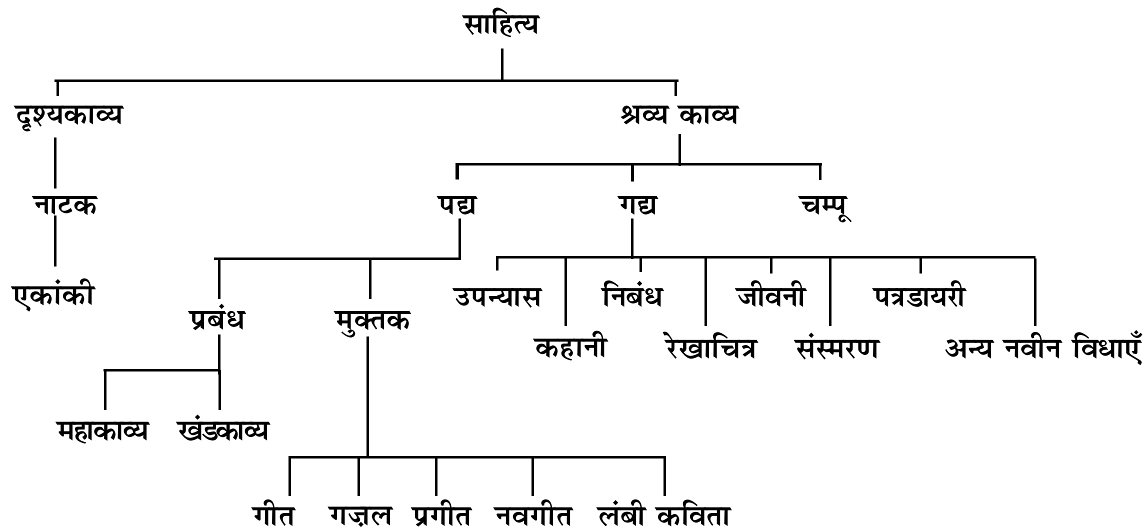

उपर्युक्त विभाजन साहित्य का एक निश्चित स्वरूप स्पष्ट करता है। यहाँ उल्लेखनीय यह है कि साहित्य का यह वर्गीकरण हम साहित्यशास्त्र के आधार पर कर सकते हैं।

साहित्य के अध्येता के सामने सबसे पहला प्रश्न साहित्य के प्रयोजन का आता है। वास्तव में साहित्य का मूल प्रयोजन आनंद है, यह आनंद सुनकर,पढ़कर या देखकर प्राप्त होता है। यह साहित्य की विधा या प्रकार पर आधारित है। साहित्य का रसास्वाद ही साहित्य का मूल लक्ष्य या प्रयोजन है - इसीलिए तो 'वाक्यं रसात्मकं काव्यं' कहा गया है।

साहित्य का प्रयोजन कभी 'स्वांत:सुखाय' कभी यश, कभी धन तो कभी व्यवहार का ज्ञान देना भी होता है। उत्तम साहित्य का अध्ययन तार्किकी दृष्टि को व्यापक फलक देता है, जीवन के विविध पहलुओं का परिचय, समस्याओं का चित्रण करते हुए कुछ हद तक उनका निराकरण भी प्रस्तुत करता है। अर्थात् साहित्य वास्तव में 'हितयुक्त' एवं 'सार्थक शब्द एवं अर्थ' के साथ प्रकट होने का भाव प्रकट करता है।

यहाँ हम साहित्यिक विधाओं का परिचय, रस, अलंकार, छन्द, शब्दशक्ति, काव्य-गुण, काव्य दोष आदि की चर्चा करेंगे।

साहित्यिक विधाओं का परिचय

(क) दृश्यकाव्य : नाटक यह दृश्यकाव्य का महत्वपूर्ण साहित्य प्रकार है। यह ऐसी काव्य विधा है, जिसे हम अभिनय के द्वारा रंगमंच पर प्रदर्शित होते हुए देख सकते हैं। इसमें दृश्य के साथ-साथ श्रवण का तत्व भी रहता है, किन्तु प्रधानता तो दृश्य की ही बनी रहती है। भारतवर्ष में नाट्य-साहित्य की परम्परा बहुत प्राचीन है, इसका मूल स्रोत वेदों में मिलता है। आचार्य भरतमुनि के 'नाट्यशास्त्र' से उसका सुनिश्चित वैज्ञानिक विधान उपलब्ध होने लगता है।

'काव्येषु नाटकम् रमयम्' कहकर भारतीय काव्यशास्त्र में नाटक की महिमा का गान किया गया है। 'नाटक' शब्द की व्युत्पति ही 'नट' धातु से हुई है। 'नट्' का अर्थ है अभिनेता द्वारा की गई अनुकृति, अर्थात् अभिनय। यह अभिनय ही नाटक का प्राणतत्व है। लोकहित और लोकरंजन की दृष्टि से साहित्य के समस्त रूपों में नाटक सर्वाधिक महत्वपूर्ण है।

नाटक के तत्व : प्राचीन भारतीय आचार्यों ने नाटक के प्रमुख तीन तत्व माने हैं। पाश्चात्य विद्‌वानों ने यह संख्या छः बताई है। सर्वप्रथम वस्तु, नेता और रस इन तीनों तत्वों को महत्व दिया गया, किंतु अब भारतीय नाटक में भी कुल छः तत्व माने जाते हैं, जो इस प्रकार हैं–

(1) **कथावस्तु :** नाटक की कथा या घटना-क्रम को कथावस्तु कहते हैं। भारतीय और पाश्चात्य नाटक में सबसे बड़ा अंतर 'रस' को लेकर है। क्योंकि भारतीय काव्यशास्त्र में 'रस' को नाटक की आत्मा माना गया है, जबकि पश्चिम में 'संघर्ष' को नाटक का प्राण माना गया है। आज के नाटक की कथावस्तु में अन्विति, चुस्तता, सुसंगतता, संक्षिप्तता, सांकेतिकता एवं तीव्रता का होना अति आवश्यक माना जाता है। संकलनत्रय (स्थान-काल-घटना)का निर्वाह और नाटकीय विडंबना भी इसके महत्वपूर्ण पहलू हैं।

(2) **पात्र एवं चरित्र का विकास :** नाटक में पात्र ही कथावस्तु या घटना व्यापार के मुख्य आधार होते हैं। नायक, नायिका, प्रतिनायक आदि पात्र आवश्यक हैं।

(3) **संवाद (कथोपकथन) :** जिस प्रकार नाटक बिना पात्रों या चरित्रों के नहीं हो सकता, उसी प्रकार इन पात्रों में परस्पर संवाद के बिना भी नाटक संभव नहीं है। संवाद दो प्रकार के होते हैं-स्वगत तथा प्रकट। स्वगत कथन का आशय यह है कोई पात्र अपने मन में जो कुछ सोचता है, उसे अपने ही मुँह से कहे। मंचन के समय यह मान लिया जाता है कि किसी भी पात्र के स्वगत कथन को नाटक का कोई दूसरा पात्र नहीं सुन रहा है, केवल दर्शक उसे सुन रहे हैं। प्रकट कथन सबके लिए होता है, उसे मंच पर खड़े पात्र एवं दर्शक सभी सुन सकते हैं।

(4) **देशकाल और वातावरण :** जिस प्रकार की कथावस्तु नाटक में ली गई है, उसके अनुसार देश-काल तथा वातावरण का चित्रण नाटककार को करना चाहिए। यह पात्रों के रहन-सहन, वेश-भूषा, भाषा-शैली और रीति-रिवाज के द्वारा संभव है।

(5) **भाषा-शैली :** नाटक में भाषा अत्यन्त महत्वपूर्ण तत्त्व है। यह किसी भी भाषा में हो सकता है किन्तु भाषा पात्र, कथा, देश-काल और वातावरण के अनुरूप होनी चाहिए।

नाटक वास्तव में अभिनय की कला है इसलिए रंगमंच से उसका सीधा संबंध है, नाटक की प्रस्तुति में विभिन्न शैलियों का समन्वय होता है। प्राचीन काल में अभिनय के चार मुख्य प्रकार थे- आंगिक, वाचिक, आहार्य और सात्विक, किन्तु आधुनिक युग में ज्ञान-विज्ञान की नई-नई खोजों के कारण नई-नई शैलियों का विकास हुआ है। प्रकाश एवं ध्वनि की नई-नई प्रभावशाली तकनीकों से नाटक समृद्ध बना है।

(6) **उद्देश्य :** कला का कोई भी माध्यम एवं साहित्य की कोई भी विधा कभी उद्‌देश्यहीन नहीं होती। भारतीय आचार्यों ने तो आदर्श के अनुसार महान उद्‌देश्य अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में से किसी एक की प्राप्ति ही माना है। वास्तव में नाटक आधुनिक युग में एक सफल एवं प्रभावशाली माध्यम के रूप में आया है जो संघर्ष के चित्रण द्वारा हमारे जीवन, समाज की वास्तविकता, खोखलापन, दंभ आदि का चित्रण करे, साथ-साथ शिक्षा, संस्कारिता एवं सामाजिक क्रांति का माध्यम बने।

(7) **रंग निर्देश :** रंग निर्देश अर्थात् नाटक की प्रस्तुति के समय रंगमंच की साज-सज्जा, भौतिक-सम्पत्ति एवं अभिनेताओं को किस समय क्या करना है इसकी सूचनाएँ।

नाटक दृश्यकाव्य की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विधा है। इसके अलावा आधुनिक युग में एकांकी भी स्वतंत्र विधा के रूप में उभरकर आई है। एकांकी में केवल एक अंक होता है, यह अंक दृश्यों में विभाजित हो सकता है। एकांकी में जीवन की कोई एक घटना, एक परिस्थिति, एक समस्या या कोई एक प्रसंग प्रस्तुत किया जाता है।

काव्य-नाटक, गीति-नाट्य, रेडियो-रूपक, नृत्य-संगीत-काव्य-रूपक आदि आधुनिक काल में विकसित होनेवाली अन्य दृश्य-काव्य की विधाएँ हैं, जिनका विकास आधुनिक तकनीक की वजह से हुआ है।

(ख)श्रव्य काव्य : श्रव्य-साहित्य वह है जिसके आस्वाद का माध्यम है श्रवण या पठन। वर्णन शैली के आधार पर श्रव्यकाव्य के तीन भेद किए जाते हैं-पद्य, गद्य और चम्पू काव्य।

(i) **पद्यकाव्य :** लय, संगीत, नाद, स्वर, अलंकार आदि से युक्त शब्दबद्ध काव्य को पद्यकाव्य कहते हैं। ऐसी रचना प्राय: छन्दोबद्ध होती है। बंध की दृष्टि से इसके दो भेद हैं : प्रबंध काव्य और मुक्तक काव्य

प्रबंधकाव्य : प्रबंध काव्य एक ऐसे विचार या भाव के माध्यम से एक दूसरे से जुड़े रहते हैं। उसमें आरंभ से अंत तक एक मूल भाव बना रहता है। इसके दो मुख्य भेद हैं–महाकाव्य और खंडकाव्य।

महाकाव्य : महाकाव्य का अर्थ है प्रत्येक दृष्टि से महान काव्य। इसमें कथानक, पात्र और शैली आदि की उदात्तता अनिवार्य है। इसका उदेश्य महान होता है। इसके मुख्य तत्व इस प्रकार हैं:

कथानक : महाकाव्य कथानक की दृष्टि से एक ऐसी सुसम्बद्ध रचना है, जिसमें उत्कृष्ट उदात्त भावों की अभिव्यक्ति हो। समग्र कथा सर्गबद्ध हो, सर्ग संख्या आठ या उससे अधिक हो।

प्रारंभ : महाकाव्य का प्रारंभ मंगलाचरण, आशीर्वचन, नमस्कार आदि से होना चाहिए।

कथा जगत प्रसिद्ध ऐतिहासिक या पौराणिक व्यक्ति से संबंधित हो। नायक महान, उच्च कुलोत्पन्न, महानगुणों से संपन्न हो। सभी रसों का परिपाक हो किन्तु श्रृंगार, वीर या शान्त में से कोई एक रस अंगीरस के रूप में आए। प्रत्येक सर्ग में एक ही छन्द का प्रयोग हो और सर्ग के अन्त में छन्द परिवर्तन आवश्यक है।

प्रकृति – चित्रण महाकाव्य का एक आवश्यक लक्षण है।

महाकाव्य का शीर्षक नायक, कवि या केन्द्रीय घटना–स्थल के नाम पर होना चाहिए।

खण्डकाव्य : महाकाव्य का 'खण्ड' यानि आंशिक रूप में अनुसरण करने वाली विधा खण्डकाव्य है। खंडकाव्य में कोई एक प्रसंग, घटना, किसी बड़ी कथा का एक अंश, एक चरित्र, एक समस्या आदि का वर्णन हो सकता है। महाकाव्य की भाँति इसमें जीवन की समग्रता या पूरी कथा नहीं होती। दिनकर का खंडकाव्य 'रश्मिरथी' कर्ण के चरित्र पर आधारित है। गुप्त जी के 'यशोधरा', 'विष्णुप्रिया' भी चरित्र–प्रधान खण्डकाव्य हैं।

महाकाव्य और खण्डकाव्य दोनों ही प्रबंध की विधाएँ हैं, दोनों ही में कथा–सूत्र, पात्र आदि रहते हैं; पर महाकाव्य के समान खंडकाव्य में कथा और वर्णनों को विस्तार की पूर्णता नहीं मिल पाती।

मुक्तक काव्य : मुक्तक स्वतंत्र किन्तु अपने आप में पूरी रचना है। जो पूर्वापर संबंध के बग़ैर ही रस उत्पन्न कर सके, अर्थ व्यंजक हो, अपने आप में संपूर्ण हो। मुक्तक में संक्षिप्तता और संकेत महत्वपूर्ण है। इनमें कथा का निर्वाह नहीं होता। सफल मुक्तक रसानुभूति कराने में सफल होता है तथा पाठक को चमत्कृत करता है।

मुक्तक दो प्रकार के होते है: गेय और अगेय।

गीत: गेयता से युक्त छोटी भावपूर्ण रचना को गीत कहते हैं। गीत में संक्षिप्तता, भावमयता, मार्मिकता, वैयक्तिकता आदि गुण होते हैं। गीत में ताल, लय और छंद का विशेष ध्यान रखा जाता है, गीत स्थायी और अंतरा दो भागों में विभाजित रहता है। हिन्दी में भक्तिकालीन कवियों ने काफ़ी मात्रा में गीत लिखे हैं, जिन्हें पद कहा जाता है। कबीर, तुलसी, सूर, मीरा, रैदास आदि ऐसे ही उल्लेखनीय भक्त कवि हैं। आधुनिक काल में भी गीत लिखे जा रहे हैं किंतु उनमें भक्ति का तत्व आवश्यक नहीं माना गया है।

प्रगीत : प्रगीत एक ऐसी लयबद्ध पद्य रचना है, जो छंदबद्ध या छंदमुक्त हो सकती है। इसमें भावों की तीव्रता अपेक्षित रहती है। यह विधा हिंदी पद्य साहित्य के लिए अपेक्षाकृत नई विधा है, वैसे तो इसमें गीत के सभी आवश्यक तत्त्व रहते हैं, किंतु आकार एवं गेय न होना इसे गीत से अलग करता है।

छंद मुक्त कविताओं में छंद का बंधन नहीं रहता। वर्णिक या मात्रिक छन्दों के नियमों का भी पालन नहीं किया जाता, किंतु लय इसमें अंत:सलिला की भांति बहती है।

लंबी कविता : हिन्दी की आधुनिक पद्य–विधा है। कुछ लंबी कविताएँ तो 40-50 पन्नों तक की हैं। इनमें विषय के प्रति काफी गंभीरता रहती है। हिन्दी में निराला की 'राम की शांति पूजा', अज्ञेय की 'असाध्य वीणा', मुक्तबोध की 'अँधेरे

में' सुल्तान अहमद की 'दीवार के इधर-उधर' महत्वपूर्ण लंबी कविताएँ हैं।

गज़ल : फारसी और उर्दू की काफ़ी प्रचलित विधा है। आजकल हिंदी में काफ़ी मात्रा में गज़लें लिखी जा रही हैं। गज़ल का अपना अलग छंदविधान होता है। उसी निश्चित छंद-विधान में चलना गज़ल के लिए आवश्यक होता है। 'शेर' का एक चरण मिसरा कहलाता है, पहले शेर को 'मतला' तथा अंतिम शेर को 'मकता' कहा जाता है। और कई शेरों से मिलकर गज़ल बनती है। हर शेर अपने आप में स्वतंत्र किन्तु गज़ल सम्पूर्ण होती है। हिंदी में दुष्यंतकुमार, शमशेर, त्रिलोचन, सूर्यभानु गुप्त, सुल्तानअहमद आदि महत्वपूर्ण गज़लकार हैं।

(ii) गद्य :

जो साहित्य छंद या लय में बंधा हुआ न हो, जिसे बोला जाए या कहा जाए वह गद्य है। आधुनिक गद्य साहित्य अत्यन्त समृद्ध है, इसमें अनेक विधाएँ विकसित हुई हैं, जैसे- उपन्यास, कहानी, निबंध, आलोचना, जीवनी, आत्मकथा, रेखाचित्र, डायरी, पत्र, यात्रावृतांत, संस्मरण आदि। यहाँ प्रमुख गद्य-विधाओं का परिचय दिया जा रहा है।

उपन्यास

अंग्रेजी के Novel शब्द का हिंदी पर्याय है। यह एक आधुनिक लोकप्रिय गद्य विधा है। यह वस्तुत: कथा-प्रधान विधा है। यह महाकाव्य की तरह आकार और कथानक के प्रसार में विशाल होता है। इसमें जीवन का समग्र और यथार्थ रूप प्रस्तुत किया जाता है। उपन्यास में समाज, इतिहास और संस्कृति का व्यापक अध्ययन एक विशिष्ट कलात्मक एवं रचनात्मक रूप में हमारे समक्ष आता है।

उपन्यास के तत्त्व इस प्रकार हैं :

(1) **कथानक :** कथानक उपन्यास का प्राण-तत्व है। इसे अंग्रेजी में 'प्लॉट' Plot कहते हैं। उपन्यास की कथा का चुनाव जीवन और जगत के किसी भी क्षेत्र से किया जा सकता है। कथानक में चार गुणों का होना आवश्यक है-मौलिकता, रोचकता, विश्वसनीयता और गतिशीलता। कथानक का संगठन संतुलित और कलात्मक होना चाहिए। उपन्यास में एक कथा मुख्य या अधिकारिक होती है और कई छोटी-छोटी कथाएँ गौण या प्रासंगिक होती हैं। उपन्यास की सारी घटनाएँ कार्य-कारण श्रृंखला से बंधी रहती हैं। कथानक की समग्रता और विशालता के कारण उपन्यास को गद्यात्मक महाकाव्य कहा गया है।

(2) **संवाद या कथोपकथन :** संवाद वास्तव में नाटक का प्राण-तत्व है, किन्तु उपन्यास के विशाल फलक को जटिलता, बोझिलता और नीरसता से बचाने के लिए पात्रानुकूल, समयानुकूल, प्रसंगानुकूल, विषयानुकूल संवादों की योजना की जाती है। संवादों से लेखक कई उदेश्य सिद्ध करता है; जैसे कथाविकास, पात्रों का चरित्र, चित्रण लेखकीय विचारों की अभिव्यक्ति आदि। कथोपकथन कथानक का एक आवश्यक अंग हो यह जरूरी है। स्वाभाविकता, संक्षिप्तता, सहजता, सोदेश्यता और मनोवैज्ञानिकता इनके आवश्यक गुण हैं। संक्षिप्त और चुटीले संवाद उपन्यास को सजीव और सरस बना सकते हैं।

(3) **पात्र और उनका चरित्र-चित्रण :** यदि उपन्यास मानव-चरित्र का चित्र मात्र है तो स्वाभाविक है उपन्यास के पात्र हमारे आस-पास के परिवेश के होंगे, इन पात्रों के सहज-सामान्य पात्रों को प्रस्तुत करके लेखक साहित्य और समाज को और नज़दीक लाता है। पात्र प्राय: दो प्रकार के होते हैं: विशिष्ट व्यक्तित्व के पात्र, व्यक्तिपात्र है तो 'गोदान' का होरी और 'निर्मला' की निर्मला वर्ग प्रतिनिधि पात्र हैं। पात्रों का क्रमश: चरित्र विकास उपन्यास को गति देना है। संवादों से, घटनाओं से, परिस्थितिओं से पात्रों के चिरत्र का उद्घाटन होता है। ये पात्र आदर्शवादी, यथार्थवादी, संघर्षशील व्यक्ति के रूप में विकसित हो सकते हैं। पात्र लेखक के हाथ का खिलौना न बने उसके चरित्र का सहज-स्वाभाविक विकास हो यह जरूरी है।

(4) **देशकाल-वातावरण (परिवेश) :** यह तत्व उपन्यास के लिए बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि कोई भी लेखक उपन्यास से संबंधित, तत्कालीन सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, प्राकृतिक और परिस्थितियों को अनदेखा नहीं कर सकता इसलिए चित्रित युग-विशेष की विभिन्न परिस्थितियों का ज्ञान उपन्यासकार के लिए जरूरी है।

(5) **भाषा-शैली :** यह विशिष्ट कला-कौशल से जुड़ा तत्व है। लेखक अपने अनुभव, विचार, भाव-प्रतिभाव,

आदि को एक विशिष्ट भाषा-शैली के माध्यम से आकार देता है। भाषा इस बात में सहायता करती है कि हम उपन्यास के कथा जगत में आसानी से प्रवेश कर सकें, उसमें विचरणा कर सकें। लेखक को कलात्मक बुनावट के द्वारा बोलचाल की भाषा का प्रयोग करना चाहिए। संकेतात्मकता, व्यंग्यात्मकता, प्रतीकात्मकता आदि भाषा को सुन्दर बनाते हैं।

शैली भी प्रत्येक उपन्यास के कथानक से अनुरूप भिन्न-भिन्न हुआ करती हैं। प्रारंभ में विवरण प्रधान शैली ही प्रमुख थी, किंतुं आज डायरी, आत्मकथा, मनोविश्लेषणात्मक, व्यंग्य शैली आदि का प्रचलन बढ़ा है।

(6) **उद्देश्य :** उपन्यास जीवन की विशद् आलोचना है। उपन्यास जीवन को निकट से देखता-समझता है, मानवीय जीवन-व्यवहार को आत्मसात करता है, मानवजीवन की जटिलताओं को देखता-समझता है। देखने के साथ ही वह परोक्ष रूप से उनका परीक्षण-मूल्यांकन भी करता है और कभी अपना मत भी देता है। यथार्थ का कलात्मक रूपांतर कर लेखक जीवन के अत्यंत व्यापक फलक में मनुष्य को दिशानिर्देश देता है।

हिन्दी साहित्य में सामाजिक, राजनैतिक, ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक, आँचलिक तथा जीवनीपरक उपन्यास लिखे गए हैं।

कहानी

उपन्यास की तरह कहानी भी कथा-प्रधान विधा है। कहानी गद्य की ऐसी विधा है, जिसमें जीवन के किसी एक प्रसंग, घटना या मन:स्थिति का वर्णन होता है। यह विधा संक्षिप्त होने के बावजूद अपने आप में पूर्ण होती है। कहानी अपने संक्षिप्त आकार के कारण आधुनिक युग की लोकप्रिय विधा बन गई है। इसकी परिभाषा इस प्रकार है-"कहानी एक ऐसा आख्यान है जो यथार्थ का उद्‌धाटन करता है, आकार में छोटा होता है, जिसे एक बैठक में पढ़ा जा सकता है और पाठक पर समन्वित प्रभाव डालता है।"

कहानी के तत्व वही हैं जो उपन्यास के हैं, अन्तर यह है कि इसमें सभी बातें कुछ संक्षिप्त आकार में आती हैं। कहानी में भी कथा, संवाद, पात्र और चरित्र-चित्रण, देशकाल या वातावरण, भाषा-शैली और उद्देश्य आदि तत्व आवश्यक हैं।

विषय की दृष्टि से कहानी मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक, पारिवारिक, सामाजिक आदि कई प्रकार की हो सकती है। हिंदी में प्रेमचंद महान् सामाजिक कहानीकार के रूप में उभरे हैं। आधुनिक युग में समस्या प्रधान, मनोविश्लेषणात्मक, वैज्ञानिक आदि कई प्रकार की कहानियाँ लिखी जा रही हैं। आधुनिक युग में कहानी परंपरागत तत्वों के साथ आधुनिक युग-बोध एवं नई परिस्थितियों ने कहानी जीवन की आंशिक अभिव्यक्ति के लिए उपयुक्त माध्यम है, इसलिए सफल और लोकप्रिय है।

निबन्ध

'निबन्ध' **शब्द** 'नि' उपसर्ग के साथ 'बंध' (बाँधना) धातु से बना है। विचारों या भावों को सुसम्बद्ध रूप में बाँधकर जिस विधा में प्रकट किया जाए वह निबंध है। हिंदी में निबंध अंग्रेजी के 'Essay' का पर्याय है। निबंध के संदर्भ में पाश्चात्य एवं भारतीय विद्वानों ने अपने विचार प्रस्तुत करते हुए उसके स्वरूप को स्पष्ट किया है।

निबंध गद्‌य का ऐसा प्रकार है, जिसमें लेखक किसी विषय अथवा वस्तु के संबंध में अपने विचारों या भावों को एक सीमित आकार में इस प्रकार प्रकट करता है कि वे पाठक के मन पर एक निश्चित छाप पैदा कर सकें। लेखक के व्यक्तित्व, चिंतन या संवेदनशीलता की अभिव्यक्ति निबंध में आवश्यक है।

हिंदी में निबंध को गद्‌य साहित्य की सर्वश्रेष्ठ विधा बतानेवाले आचार्य रामचंद्र शुक्ल कहते हैं-"यदि गद्य कवियों या लेखकों की कसौटी है तो निबंध गद्य की कसौटी है।" बाबू गुलाबराय के अनुसार "निबंध उस गद्‌य रचना को कहते हैं जिसमें सीमित आकार के भीतर किसी विषय का वर्णन या प्रतिपादन एक विशेष निजीपन, स्वच्छंदता, सौष्ठव और सजीवता तथा आवश्यक संगति और सभ्यता के साथ किया गया हो।" इसके बावजूद डॉ. धीरेन्द्र वर्मा कहते हैं कि निबंध को परिभाषित करना काफी कठिन है।

निबंध की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं : निबंध सीमित आकार की गद्‌य-रचना है, इसमें गद्‌य का चरम विकास झलकता है, लेखक के निजी व्यक्तित्व की चरम अभिव्यक्ति निबंध का प्राण तत्व है। ललित निबंध में तो व्यक्तित्व ही निबंध का पर्याय बनकर प्रकट होता है। निबंध में विषय का महत्व नहीं किन्तु लेखक की उस विषय तक पहुँचने की पद्धति, उसकी

भाषा शैली, उसका वर्णन-विवरण, उसके व्यक्तित्व का स्पर्श अधिक महत्वपूर्ण है। निबंध में उनमुक्तता और स्वच्छंदता होते हुए भी, प्रभावपूर्ण अन्विति, सरसता, सजीवता आदि अपेक्षित है। इतना होने के बाद भी परिपक्वता, प्रौढ़ता और परिष्कृत भाषा-शैली भी निबंध की महत्व की विशेषताएँ हैं। निबंधकार स्वयं आदि से अन्त तक अपनी बात कहता है। अत: भाषा सहज, सरस और सुन्दर होनी चाहिए।

निबंध के प्रमुख प्रकार हैं : वर्णनात्मक, विवरणात्मक, विचारात्मक, भावात्मक, ललित निबंध आदि। निबंध में कई शैलियों का प्रयोग होता है, यथा-व्यास शैली, समास शैली, धारा शैली, तरंग शैली, विक्षेप शैली। वास्तव में निबंध गद्य साहित्य की अत्यन्त महत्वपूर्ण विधा है, क्योंकि अन्य विधाओं में लेखक पर्दे के पीछे रहता है, इसमें वही सीधा पाठक के सामने होता है। वह अपना हृदय खोलकर पाठक के सामने रख देता है, इसलिए निबंध लेखक और पाठक को सर्वाधिक करीब लानेवाली विधा है।

रेखाचित्र

आधुनकि गद्य-साहित्य की रेखाचित्र सर्वथा नवीन विधा है। रेखाचित्र वास्तव में 'चित्रकला' का शब्द है, जो अंग्रेजी के 'स्केच' का पर्याय है। रेखाओं के द्वारा बना हुआ चित्र रेखाचित्र है। चित्र में जो काम रेखाएँ करती हैं, वही काम रेखाचित्र में शब्द करते हैं। जब लेखक शब्दों के द्वारा किसी व्यक्ति, वस्तु या दृश्य का चित्र अंकित करता जाए, तो इसे रेखाचित्र कहते हैं।

रेखाचित्र की कुछ प्रमुख लाक्षणिकताएँ इस प्रकार हैं : कल्पना की अपेक्षा इसमें वास्तविकता का प्राधान्य होता है, जिस व्यक्ति, वस्तु आदि का रेखाचित्र तैयार करना हो उसके प्रति लेखक का घनिष्ठ रागात्मक संबंध हो, चित्रात्मक सूझ भी आवश्यक है। महादेवी वर्मा के रेखाचित्र इन सभी विशेषताओं से पूर्ण हैं। हिंदी में कई प्रकार के रेखाचित्र लिखे गए हैं जिनमें मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक, घटनाप्रधान, परिवेशप्रधान, व्यंग्यप्रधान, व्यक्तिप्रधान या आत्मपरक मुख्य हैं। हिंदी के प्रसिद्ध रेखाचित्रकारों में महादेवी वर्मा, रामवृक्ष बेनीपुरी, कन्हैयालाल मिश्र, जयनाथ नलिन, बेढब बनारसी, श्रीराम शर्मा आदि मुख्य हैं।

संस्मरण

सम्यक स्मरण अर्थात् संस्मरण। किसी महान् या स्मरणीय व्यक्ति या घटना की यादों को लेकर दिया गया चित्रण संस्मरण है। संस्मरण प्राय: विशिष्ट व्यक्तियों से संबंधित होते हैं। संस्मरण के लिए लेखक का स्मरणीय व्यक्ति के साथ व्यक्तिगत संबंध होना आवश्यक है। यह आत्मपरक होता है। इसमें विवरण की प्रचुरता रहती है, स्वाभाविक तौर पर इसमें अतीत की घटनाओं का वर्णन होता है। चित्रोपम शैली संस्मरण को अधिक सुन्दर और सार्थक बना देती है। संस्मरण कई प्रकार के होते हैं: आत्मकथात्मक, यात्राविषयक, जीवनी-स्वरूप, पत्रात्मक, डायरी, श्रद्धांजलि आदि से संबंधित।

रेखाचित्र और संस्मरण मिलती-जुलती विधाएँ हैं। संस्मरण प्राय: प्रसिद्ध व्यक्ति के विषय में ही लिखा जाता है, रेखाचित्र के लिए यह आवश्यक नहीं है। ये दोनों विधाएँ पाश्चात्य साहित्य की देन है।

जीवनी :

जीवनी में लेखक किसी व्यक्ति का जीवन चरित्र प्रस्तुत करता है। इसमें प्राय: उस व्यक्ति की जन्म से लेकर मृत्यु तक की प्रमुख घटनाएँ होती हैं। जिसकी जीवनी लिखी जा रही हो उसकी उपलब्धियों पर प्रकाश डाला जाता है। जीवनी न इतिहास है न उपन्यास, इन दोनों की खूबियाँ इसमें मिलती हैं। सत्य की उपेक्षा करके सफल जीवनी लिखना संभव नहीं, अत: लेखक जीवनी-नायक से जुड़े सभी तथ्यों को इकट्ठा करके, निष्ठा और ईमानदारी से अपनी प्रतिभा और कला के बल पर जीवनी लिखने का काम करता है।

आत्मकथा :

आत्मकथा जीवनी का ही एक दूसरा रूप है। आत्मकथा में व्यक्ति स्वयं अपने जीवन की गाथा कहता है जबकि जीवनी में किसी अन्य व्यक्ति के जीवन से जुड़े तथ्यों के आधार पर ही उसके बारे में लिखा जाता है। इसके अलावा और भी कई गद्य विधाएँ पाश्चात्य साहित्य के प्रभाव से हिंदी में आई हैं उनमें से रिपोर्ताज, डायरी, पत्र-साहित्य, यात्रा-वृत्तांत, साक्षात्कार,फीचर आदि विशेष उल्लेखनीय हैं।

रस

साहित्य शास्त्र में रस को ब्रह्मानन्द स्वरूप माना गया है, क्योंकि साहित्य या कला से मिलने वाला सात्विक आनंद अवर्णनीय और अद्‌भुत होता है; यही रस है। आचार्य भरत ने अपने नाट्यशास्त्र में **विभावानुभाव संचारी संयोगात रसनिष्पत्तिः** कहकर साहित्य से प्राप्त होने वाली रस प्रक्रिया को समझाया है।

रस के अंग- स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव और संचारीभाव रस के आवश्यक अंग हैं।

स्थायी भाव : ये भाव जन्मजात होते हैं, और मनुष्य के चित्त में सदैव विद्यमान रहते हैं, और कारण उपस्थित होने पर जागृत होकर प्रकट होते हैं। स्थायी भावों की संख्या दस मानी जाती है - रति, हास्य, शोक, क्रोध,उत्साह, भय, जुगुप्सा, विस्मय, निर्वेद एवं वात्सल्य।

विभाव : इनके कारण ही स्थायी भाव जागृत होते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं, आलम्बन और उद्‌दीपन। जिन व्यक्तियों या पात्रों से स्थायीभाव उत्पन्न होता है, उन्हें आलंबन कहा जाता है। जिसके मन में यह भाव जागृत होता है उसे आश्रय कहते हैं। आश्रय के मन में जिन प्राकृतिक स्थितियों द्वारा स्थायी भाव उत्पन्न होता है उसे उद्‌दीपन विभाव कहते हैं।

अनुभाव : ये स्थायी भाव के बाद पैदा होनेवाला भाव है, यह वहीं उत्पन्न होता है जहाँ स्थायी भाव जागा हुआ होता है। अनुभाव आश्रय के मन में जागे हुए स्थायी भाव के कारण स्वत: ही प्रकट हो जाते हैं; जैसे- पसीना आना, रोमांचित हो जाना इत्यादि। अनुभाव चार प्रकार के होते हैं--

(1) कायिक-दैहिक क्रियाएँ (2) मानसिक-वाचिक, कथन आदि (3) आहार्य-आभूषण, वेश-भूषा (4) सात्विक-स्वेद, अश्रु रोमांच।

व्यभिचारी अथवा संचारी भाव : ये भाव स्थायी भाव को अधिक पुष्ट करते हैं, और रस-निष्पत्ति में मदद करते हैं। संचारी भावों की संख्या तैंतीस बताई गई है -इनमें प्रमुख हैं - शंका, लज्जा, चिंता, गर्व, विषाद, आलस्य, आवेग, स्मृति, धैर्य, निद्रा, मोह आदि।

रस के भेद -

शृंगार रस : इसका स्थायी भाव रति है। स्त्री-पुरुष के बीच के प्रेम का वर्णन साहित्य में शृंगार रस कहलाता है। इसके दो प्रकार हैं संयोग और वियोग । संयोग में नायक-नायिका साथ होते हैं, उनके बीच प्रेम होता है। वर्षा, बिजली चमकना, चाँदनी रात आदि उद्‌दीपन हैं। इनके साथ संचारी भाव लगे होते हैं जैसे-चिंता, लज्जा, भय, उत्सुकता आदि। इन संचारी भावों से शृंगार और पुष्ट होता है।

वियोग शृंगार वहाँ होता है जहाँ नायक-नायिका अलग होते हैं। कोयल की कूक, पपीहे की पुकार आदि उदद्‌ीपन हैं तथा विषाद, मोह आदि संचारी हैं।

हास्य रस : इसका स्थायी भाव हास्य है। विकृत चेष्टाओं, कथनों आदि की वजह से हास्यरस उत्पन्न होता है। उपहास का पात्र आलंबन और इससे संबंधित वस्तुएँ उद्‌दीपन हैं। हर्ष, चपलता, आलस्य आदि संचारी भाव हैं।

करुण रस : इसका स्थायी भाव शोक है। जब साहित्य में अत्यन्त दुखद घटना या प्रसंग का निरूपण होता है तब करुण रस की उत्पत्ति होती है। अपने किसी प्रिय व्यक्ति से सदा के लिए वियोग करुणा उत्पन्न करता है, वही प्रिय व्यक्ति आलंबन है, उससे संबंधित वस्तुएँ उद्‌दीपन हैं; रोना, आहें भरना, मूर्छित होना आदि अनुभाव हैं तथा निर्वेद स्मृति, चिन्ता, विषाद आदि संचारी भाव हैं।

रौद्र रस : इसका स्थायी भाव क्रोध है। इसमें कोई शत्रु या खलनायक आलम्बन होता है; उसकी चेष्टाएँ या कार्य उद्‌दीपन होते हैं। आँखें लाल होना, मुट्ठियाँ भींचना, दाँत किट-किटाना आदि अनुभाव हैं तथा क्रोध से काँपना,भौंहें तन आना, चेहरा लाल होना आदि अनुभाव हैं तथा आवेग, गर्व, चपलता, उत्सुकता संचारी भाव हैं।

वीर रस : इसका स्थायी भाव उत्साह है। इसका चित्रण किसी महान नायक के महान धर्म, युद्ध, उदारता, दानवीरता आदि में होता है। इसमें शत्रु या याचक आलंबन है। शत्रु की चालें, उत्तेजनापूर्ण कथन, चेष्टाएँ आदि उद्‌दीपन हैं। क्रोध से काँपना, भौंहें तन जाना, चेहरा लाल होना आदि अनुभाव हैं। तथा आवेग, हर्ष, गर्व, चपलता आदि संचारी भाव हैं।

भयानक रस : इसका स्थायी भाव भय है। डरावने दृश्य या भयजनक प्रसंगों के चित्रण से भयानक रस की उत्पत्ति होती है।

छंद

'छन्द' का अर्थ होता है 'बाधना'। इसलिए जब कोई उक्ति किसी विशेष लय, मात्रा या वर्ण-योजना में बंध जाती है तो उसे छन्द कहते हैं।

काव्य में छन्दों को बहुत महत्व दिया गया है, क्योंकि छन्द काव्य में छिपे भाव एवं रस के संप्रेषण में मदद करते हैं। प्राचीन और मध्यकाल में काव्य का छन्द-बद्ध होना आवश्यक था, किन्तु आधुनिक काल में छन्द मुक्त या अछांदस काव्य-रचना भी होती है।

छन्द का उपयोग पद्य को सही तरीके से पढ़ने-समझने में आवश्यक तौर पर किया जाता है। छन्द के घटकों में यति, गति और लय मुख्य माने जाते हैं। लय अंतर्निहित होती है, जिसके कारण काव्य कर्णप्रिय होता है। तथा यति और गति छंद के प्रवाह और लय को बनाए रखने में मदद करते हैं।

छन्द के भेद : छन्द के दो भेद हैं : (1) वर्णिक (2) मात्रिक

वर्णिक छन्द उन्हें कहा जाता है, जिनमें वर्णों के विशेष क्रम अथवा योजना का आधार होता है। मात्रिक छन्द में मात्राओं की गणना का आधार लिया जाता है। वर्णिक छन्दों में प्रमुख हैं: कवित्त, सवैया, मालिनी, शिखरणी, मन्दाक्रान्ता, इन्द्रवज्रा आदि हैं। मात्रिक छन्दों में प्रमुख हैं। दोहा, रोला, सोरठा, बरवै, चौपाई, छप्पय, कुंडलिया आदि।

गण पहचानने की रीति : वर्णिक छन्द में वर्णों के क्रम का नाम 'गण' दिया गया है। गण तीन वर्णों का समूह है, इसमें निश्चित लघु-गुरु क्रम से तीन वर्ण होते हैं। गण कुल आठ हैं, इन गणों को समझने और याद करने की रीति इस प्रकार है :

' य माता रा ज भा न स ल ग म्' - मात्र इस एक सूत्र के सहारे हम प्रत्येक गण के लघु-गुरू क्रम को समझ और याद रख सकते हैं - उदाहरण के लिए

गण		**उदाहरण**	**लघु-गुरु का क्रम**	**मात्राएँ**
(1)	य गण	य माता (हमारा)	ISS मात्राएँ	5
(2)	म गण	मा तारा (राजासा)	SSS मात्राएँ	6
(3)	त गण	ता राज (पाताल)	SSI मात्राएँ	5
(4)	र गण	राज भा (गायिका)	SIS मात्राएँ	5
(5)	ज गण	जभा न (न हान)	ISI मात्राएँ	4
(6)	भ गण	भान स (मानस)	SII मात्राएँ	4
(7)	न गण	न स ल (नमन)	III मात्राएँ	3
(8)	स गण	सलग म्(सुकथा)	IIS मात्राएँ	4

जिस गण की मात्रा का क्रम देखना हो उपर्युक्त सूत्र के अनुसार, उसी गण के प्रथम नामाक्षर से शुरू करके तीन अक्षर ले लेने से उसका मात्रा का क्रम स्पष्ट हो जाएगा।

लघु और गुरु : छन्द के सन्दर्भ में, ह्स्व को 'लघु' और दीर्घ को 'गुरु' कहते हैं। ये दोनों वर्ण के भेद हैं। दीर्घाक्षर को 'गुरु' कहते हैं, जिसका चिह्न 'S' है, यह अंग्रेजी के एस-S के समान है, लघु का चिह्न 'I' है यह खड़ीपाई के समान होता है।

मात्रा - गणना के नियम :

(1) अ, इ, उ, ऋ (ह्रस्व स्वर) या इनसे युक्त व्यंजन लघु माने जाते हैं।

(2) चन्द्रबिन्दु वाले स्वर या इनसे युक्त व्यंजन होते हैं, जैसे 'हूँ'

(3) आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, इत्यादि दीर्घ स्वर और इनसे युक्त व्यंजन गुरु होते हैं जैसे- ईख, मामा, ऐनक आदि।

(4) जिस वर्ण पर अनुस्वार हो वह अ होता है, जैसे 'सुगंध' में गं गुरु है।

(5) विसर्ग युक्त वर्ण भी गुरु होता है, जैसे : दुःख =SI

(6) संयुक्त वर्ण के पूर्व का लघु वर्ण भी गुरु हो जाता है, जैसे -'धर्म'=SI

(7) हलन्त के पहले का वर्ण भी गुरु होता है जैसे- सन् में 'स' S है, और 'न्' की मात्रा नहीं गिनी जाएगी क्योंकि उसमें स्वर नहीं है।

प्रमुख छंदों का परिचय

वर्णिक छंद

कवित्त : कवित्त के प्रत्येक चरण में 31 वर्ण होते हैं, 16–15 या 8,8,8,7, वर्णों पर यति रहती है तुक चारों चरणों में होती है;जैसे–

सहज विलास हास, प्रिय की हुलास तजि 8+8=16
दु:ख के निवास प्रेम पास परियत है। 8+7=15

सवैया : सवैया छंद के कई भेद होते हैं। ये भेद गणों के संयोजन के आधार पर बनते हैं। इनमें सबसे प्रसिद्ध ' 'मत्तगयंद सवैया' है। अन्य सुन्दरी, मदिरा, दुर्मिल सवैया भी जाने जाते हैं।
मत्तगयंद सवैया में प्रत्येक चरण में सात भगण और अंत में दो गुरु वर्ण होते हैं, इस प्रकार सवैया के प्रत्येक चरण में 23-23 वर्ण होते हैं ; जैसे–

कल काननि कुंडल मोरपखा, उर पै बनमाल बिराजति है।
मुरली कर में अधरा मुसकानि – तरंग महाछवि छाजति है।
रसखानि तन पीत पटा दामिनि की दुति लाजति है।
वहि बांसुरी की धुनि कान परें कुलकानि हियो तजि भागति है।

मात्रिक छंद

दोहा : इस छंद के पहले और तीसरे चरण में 13-13 तथा दूसरे एवं चौथे चरण में 11-11 मात्राएँ होती हैं। पहले और तीसरे चरण के प्रारंभ में 'जगण' नहीं होना चाहिए और अंत में लघु होना आवश्यक है ; जैसे–

I I	I I	S I I	S I	S	=13	I I S		I S	I S I	+11
बत	रस	लालच	लाल	की,		मुरली		धरी	लुकाय।	=24
S I	I S	S I I	I S			S I	I S	I I	S I	+11
सौह	करे	भौंहन	हँसे		=13	दैन	कहे	नट	जाय ॥	=24

सोरठा : दोहा और सोरठा दोनों अर्धसम जाति के मात्रिक छंद है। यह छंद दोहे का उलटा होता है, अर्थात् इसके पहले तथा तीसरे चरण में 11–11 तथा दूसरे और चौथे चरण में 13–13 मात्राएँ होती हैं। सोरठा में पहले और तीसरे तथा दूसरे और चौथे में तुक मिलता है, जैसे

S I	I I I I	I I	S I	= 11	I I S I I	I I I I	I I I			+13
जेहि	सुमिरत	सिधि	होइ,		गननायक	करिवर	वदन			=24
I I I	I I S I	S I		= 11	I S	S I	I I	I I	I I I	= 13
करहु	अनुग्रह	सोइ,			बुद्धि	रासि	सुभ	गुन	सदन	=24

चौपाई : यह सम जाति का मात्रिक छंद है, इसमें चार चरण होते हैं, प्रत्येक चरण में 16-16 मात्राएँ होती हैं, जैसे –

S S I	S I I	S I I	I I	I I		=16
कंकन	किंकिनि	नूपुर	धुनि	सुनि।		
I I I	I I I	I I	S I	I I I	I I	=16
कहत	लखन	सन	राम	हृदय	गुनि।।	
S I I	I I I	S I S	S S			=16
मानहु	मदन	दुंदुभी	दीन्ही।			
I I S	S I	I I I	I I	S S		=16
मनसा	विस्व	विजय	कहँ	कीन्ही।।		

रोला : यह एक सममात्रिक छंद है, इसके प्रत्येक चरण में 24 मात्राएँ होती हैं। 11 तथा 13 मात्राओं पर विराम होता है। कभी-कभी अन्त में लघु या गुरु या दो लघु वर्ण आते हैं, जैसे-

I I SS	I I	I S	S I	I I	S	I I S S		=16
मद माता	जग	भला	दीन	दुख	क्या	पहचाने।		
S I S I	I I	S I	S I	S	I I	S	S S	=24
दीनबंधु	बिन	कौन	दीन	के	हिय	को	जाने।	
S S	S	I	I S I	S I	S	S I	I S S	=24
होता	जो	न	अधार	शोक	में	नाथ	तुम्हारा।	
I S S I	I I	S I	I I I S	I I S	S S			=24
निराधार	यह	जीव	भटकता	फिरता	मारा।			

बरवै : यह मात्रिक अर्धसम छंद है। इसके पहले तीसरे चरण में 12 तथा दूसरे-चौथे में 7 मात्रएँ होती हैं। सम चरणों के अन्त में जगण अथवा तगण का प्रयोग होता है, जैसे

S I	S I	I I	S I I	=12	I S	I S I	= 07
वाम	अंग	शिव	शोभित		शिव	उदार	= 19
I I I	I S I I	S	I I	=12	I I I	I S I	= 07
सरद	सुवारिद	में	जनु		तड़ित	विहार	= 19

•

अलंकार

'अलंकार' शब्द की व्युत्पत्ति 'अलम्' धातु से हुई है। व्युत्पत्ति के आधार पर अलंकार उसे कहा जाता है जो भूषित करने का उपादान हो। नारी के आभूषणों की भांति अलंकार भी काव्य के शोभाकारक धर्म हैं। अर्थात् अलंकार ऐसे उपादान हैं, जो काव्य की शोभा में वृद्धि के साथ-साथ भावाभिव्यक्ति एवं भावग्रहण में भी सहायक सिद्ध होते हैं। कवि सुमित्रानंदन पंत के शब्दों में- "अलंकार केवल वाणी की सजावट के लिए नहीं, वे भाव की अभिव्यक्ति के विशेष द्वार हैं। भाषा की पुष्टि के लिए, राग की परिपूर्णता के लिए आवश्यक उपादान हैं, वे वाणी के आचार, व्यवहार, रीत, नीति हैं।"

काव्य में अलंकार का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है, आचार्य केशवदास के शब्दों में-

"जदपि सुजाति, सुलक्षणी, सुबरन, सरस, सुवृत।
भूषण बिनु न बिराजई, कविता, बनिता मित्ता।।"

वास्तव में अलंकार काव्य का आवश्यक उपादान तो है, किन्तु अनिवार्य नहीं।

अलंकार भेद : शब्द और अर्थ साहित्य के मूल तत्व हैं। इसी अधार पर अलंकार के भी दो प्रकार हैं शब्दालंकार और अर्थालंकार।

(1) शब्दालंकार : शब्द के सौन्दर्य की वृद्धि करने वाले, और उसे आकर्षक, अलंकारमय बनाने वाले तत्व शब्दालंकार हैं। इसके प्रमुख भेद हैं : अनुप्रास, श्लेष, यमक, और वक्रोक्ति।

अनुप्रास : जहाँ काव्य में वर्णों की आवृत्ति एक से अधिक बार हो, आवृत्ति के कारण लय, सौन्दर्य पैदा हुआ हो ; जैसे-

'तुम तुंग हिमालय श्रृंग और मैं चंचल गति सुर सरिता,
तुम विमल हृदय उच्छ्वास और मैं कान्त कामिनी कविता'

श्लेष : 'श्लेष' का शाब्दिक अर्थ है चिपका हुआ, अर्थात् एक शब्द के एकाधिक अर्थ निकलते हों, तो श्लेष अलंकार होता है; जैसे-

'रहिमन पानी राखिये, बिन पानी सब सून।
पानी गये न ऊबरे, मोती मानस चून ॥'

यहाँ 'पानी' के तीन अर्थ हैं- मोती के संन्दर्भ में कान्ति, मानस अर्थात् मनुष्य के संदर्भ में आत्मसम्मान और चूने के सन्दर्भ में जल।

यमक : जहाँ एक या एक से अधिक शब्द एक से अधिक बार प्रयुक्त हों तथा उनका अर्थ भी प्रत्येक बार भिन्न हो। शब्द की एकाधिक बार आवृत्ति और भिन्न अर्थ काव्य में चमत्कार पैदा कर देता है; जैसे-

"कनक-कनक ते सौ गुनी, मादकता अधिकाय।
वा खाए बौराय जग, या पाए बोराय ॥"

इस दोहे में 'कनक'का दो बार प्रयोग हुआ है। दोनों बार उसका अर्थ भिन्न है। पहले स्थान पर 'कनक' यानी 'धतूरा' और दूसरे स्थान पर कनक यानी 'स्वर्ण' है।

वक्रोक्ति : जहाँ पर वक्ता के कथन का श्रोता द्वारा वक्ता के अभिप्रेत आशय से चमत्कार पूर्ण भिन्न अर्थ लगाया जाए, वहाँ वक्रेक्ति अलंकार होता है, जैसे-

" को तुम हो ? इत आए कहाँ ?
घनश्याम हौं, तो कितहूँ बरसो।
चितचोर कहावत हैं हम तो,
तहँ जाहु जहाँ धन है सरयो ॥"

इस पद में राधा–कृष्ण का सुन्दर परिहास है, यह वक्रोक्ति का एक श्रेष्ठ उदाहरण है। राधा अपने महल में कृष्ण की प्रतीक्षा में है कि कृष्ण आकर द्वार खटखटाते हैं। कृष्ण के आगमन से प्रसन्न राधा का प्रफुल्लित हृदय परिहास करना चाहता है, अत: वह तुरंत द्वार खोल नहीं देती, पूछती है "तुम कौन हो ? यहाँ कैसे आये।"कृष्ण उत्तर देते हैं "घनश्याम हूँ"। राधा इसका अर्थ जो कृष्ण को अभिप्रेत है वह न लगाकर घन+श्याम यानी 'बादल' लगाती है। उत्तर देती है 'अगर घनस्याम (बादल) हो तो कहीं जाकर बरसो'। कृष्ण हारकर दूसरा नाम बताते हैं– 'मुझे चित्तचोर भी कहा जाता है'– राधा विदुषी थी, यहाँ वह चित्तचोर का अर्थ चोर लगाकर जवाब देती हैं– तो फिर जहाँ काफ़ी मात्रा में धन है वहाँ जाओ। इस प्रकार यहाँ श्लेष के आधार पर भिन्नार्थ की कल्पना करने से श्लेष वक्रोक्ति है।

(2) अर्थालंकार : अर्थालंकार में किसी शब्द विशेष के कारण चमत्कार नहीं रहता है। वास्तव में अर्थालंकार भाषाभिव्यक्ति की शैलियाँ ही हैं। अर्थालंकार के प्रमुख चार अंग हैं: **उपमेय**–जो प्रस्तुत हो या जिसकी समानता बतानी हो, **उपमान**– जो अप्रस्तुत हो या जिससे समानता बताई जाए, **साधारण धर्म** – उपमेय और उपमान के बीच जो भी समान गुण या दोष हो उसे साधारण धर्म कहते हैं,

वाचक शब्द–उपमेय और उपमान के बीच जिस शब्द के द्वारा समानता दिखाई जाए, उसे वाचक शब्द कहते हैं।

प्रमुख अर्थालंकार इस प्रकार हैं–

उपमा : जब दो वस्तुओं में भिन्नता रहते हुए भी समानता स्थापित की जाए, तब उपमा अलंकार होता है, जैसे

'बन्दौं कोमल कमल-से जग जननी के पाँव'

यहाँ 'पाँव' शब्द उपमेय है, 'कमल' उपमान है, 'कोमल' साधारण धर्म है और 'से' वाचक शब्द है। पूर्णोपमा में उपमा के सभी अंग अर्थात् उपमेय, उपमान, साधारण धर्म और वाचक शब्द विद्यमान रहते हैं; जैसे–

'राम लखन सीता सहित सोहत पर्ण निकेत।
जिमि वासव बस अमरपुर शची जयन्त समेत॥'

रूपक : जब उपमेय पर उपमान का आरोप करते हुए अभेद बताया जाए, तब रूपक अलंकार होता है। इसमें प्रस्तुत (उपमेय) अप्रस्तुत (उपमान) का रूप ग्रहण कर लेता है, इसलिए यह रूपक कहलाता है, जैसे–

(1)

'मुख राशि वा राशि ते अधिक।
उदित ज्योति दिन राति॥'

(2)

रनित भृंग घंटावली झरत दान मधुनीर।
मंद-मंद आवत चल्यो कुंजर कुंज समीर॥

पहले उदाहरण में मुख पर राशि का, और दूसरे उदाहरण में समीर की सामग्री भृंग और मकरन्द में हाथी के घण्टे का आरोप किया है।

उत्प्रेक्षा : जहाँ प्रस्तुत (उपमेय) की अप्रस्तुत (उपमान) के रूप में संभावना की जाए वहाँ उत्प्रेक्षा होती है, यह अलंकार मनु, जनु, मनों, जानो आदि शब्दों से प्रकट होता है; जैसे–

'सोहत ओढ़े पीत-पट, स्याम सलोने गात।
मनौ नीलमनि सैल पर, आतप परयो प्रभात॥'

संदेह : जहाँ उपमेय में उपमान का संदेह प्रकट किया जाता हो, वहाँ संदेह अलंकार होता है; जैसे–

'कि तुम हरिदासन में कोई। मोरे हृदय प्रीति अति होई।
की तुम रामदीन अनुरागी । आयहु मोहि करन बड़ भागी॥'

इसमें प्रस्तुत का वर्णन इस प्रकार किया जाता है कि तथ्य और अतथ्य का निश्चय न किया जा सके, इस प्रकार संदेहालंकार की रचना होती है, जैसे–

विरोधाभास : वास्तविक विरोध न होते हुए भी जहाँ विरोध का आभास मालूम पड़े वहाँ 'विरोधाभास' अलंकार होता है, जैसे–

या अनुरागी चित्त की, गति समुझहिं नहिं कोय।
ज्यों–ज्यों बूड़ै श्याम रंग, त्यों–त्यों उज्ज्वल होय॥

यहाँ श्याम रंग में डूबने पर उज्ज्वल होना विरोध मालूम पड़ता है, लेकिन यह वास्तविक विरोध नहीं है क्योंकि जितना श्याम रंग (कृष्ण के ध्यान) में डूबेगा (मग्न होगा) उतना ही उसका हृदय उज्ज्वल (निर्मल) होगा।

मानवीकरण :जब प्रकृति या जड़ पदार्थों में मनुष्य के गुणों का आरोप करके चेतन के समान, उनकी चेष्ठाओं का चित्रण किया जाए, तब मानवीकरण अलंकार होता है; जैसे–

'सिंधु –सेज पर धरा वधू, अब तनिक संकुचित बैठी–सी।
प्रलय निशा की हलचल स्मृति में, मान किए–सी, ऐंठी–सी।

यहाँ 'पृथ्वी' पर वधू के रूप, गुण और कार्यों का आरोप किया गया है, इसलिए मानवीकरण अलंकार है।

•

शब्दशक्ति

मनुष्य के हृदय के सभी भावों की अभिव्यक्ति भाषा के माध्यम से होती है। भाषा में शब्द और अर्थ दोनों का समान महत्त्व है। शब्द के बिना अर्थ और अर्थ के बिना शब्द का कोई अस्तित्व नहीं है।

किसी भी शब्द के सुनने या पढ़ने पर हमें किसी विशेष पदार्थ भाव आदि का बोध होता है। यह बोध यदि कोष, व्याकरण आदि के द्वारा निश्चित किए गए या प्रसिद्ध अर्थ पर आधारित है तो उसे मुख्यार्थ या वाच्यार्थ कहते हैं। सामान्य बातचीत में अधिकतर मुख्यार्थ या विद्यमान रहता है। किन्तु कई बार बात को विशेष चमत्कारपूर्ण और हृदयस्पर्शी बनाने के लिए ऐसे शब्दों को लिया जाता है, जिनमें मुख्यार्थ के अतिरिक्त अन्य विशिष्ट अर्थ शब्द शक्तियों का रूप धारण करते हैं।

शब्द शक्ति के प्रकार :

शब्द की अभिव्यंजना शक्ति और क्षमता अलग-अलग और विशेष होती है। शब्दों को सुनकर या पढ़कर अर्थ का ज्ञान हम कई प्रक्रियाओं से करते हैं। इस दृष्टि से शब्द शक्ति के तीन भेद हैं;

(1) अभिधा : शब्द की जिस शक्ति से उसके प्रथम स्वाभाविक, सामान्य अर्थ का ज्ञान होता है, उसे अभिधा शब्द शक्ति कहते हैं। अभिधा शक्ति द्वारा ज्ञात होने वाले अर्थ को वाच्यार्थ तथा उस शब्द को वाचक शब्द कहते हैं।

सीधा, स्पष्ट कथन अभिधा की खास विशेषता है, अभिधा शक्ति का बोध कराने वाले साधन हैं-व्याकरण, कोश व्यवहार आदि। जैसे ;

वह तोड़ती पत्थर
देखा उसे मैंने इलाहाबाद के पथ पर
वह तोड़ती पत्थर।

यहाँ सीधे-सीधे जो अर्थ प्रकट होता है, वही अर्थ कविता का है।

(2) लक्षणा: जब किसी शब्द के वाच्यार्थ अथवा मुख्यार्थ को ग्रहण करने से अर्थ प्राप्ति न हो तब अभिधा को छोड़कर लक्षणा शक्ति का प्रयोग किया जाता है। लक्षणा शब्द शक्ति से विदित होने वाले अर्थ के लिए तीन बातों का होना आवश्यक है :

(1) मुख्यार्थ से अभिव्यक्त अर्थ में बाधा पड़ना।

(2) जब मुख्य अर्थ बाधित हो जाता है तो उसके स्थान पर दूसरा अर्थ लिया जाता है, परंतु यह दूसरा अर्थ भी मुख्य अर्थ से ही संबंधित होता है।

(3) मुख्य अर्थ को छोड़कर अन्य अर्थ ग्रहण करने में या तो कोई विशेष कारण हो या कोई रूढ़ि अथवा प्रयोजन हो यह आवश्यक है। जैसे;

उषा सुनहले तीर बरसती
जयलक्ष्मी सी उदित हुई।

यहाँ 'तीर' का अर्थ 'किरण' है 'भाला या तीर' नहीं।

(3) व्यंजना : काव्य का ऐसा गूढ़ अर्थ जो अभिधा से न जाना जा सके, उसे व्यंजना से जाना जाता है। अर्थात् ऐसा अर्थ जो अभिधा या लक्षणा के प्रयोग के बाद भी इतना गूढ़ हो कि उसे प्रकट करने के लिए तीसरी अर्थात् व्यंजना शक्ति का सहारा लेना पड़ता है। व्यंजना से काव्य में सौन्दर्य और भाव में गहनता आती है। जैसे;

चलती चाकी देख के, दिया कबीरा रोय।
दो पाटन के बीच में, साबुत बचा न कोय॥

यहाँ चक्की के पाट का अर्थ है जन्म और मृत्यु। जिनके बीच पिसकर कोई बच नहीं सकता है।

•

काव्य के गुण - दोष

साहित्य में गुण का अत्यधिक महत्त्व है, यह काव्य की आंतरिक वस्तु है। गुण के यथोचित प्रयोग से ही काव्य-सौन्दर्य में वृद्धि होती है। काव्य की विषय-वस्तु भाव और रस से गुण का अनिवार्य संबंध है। जैसे - प्रकृति-प्रेम और श्रृंगार रस में माधुर्य गुण, वीर रस में ओजगुण तथा भक्ति या शान्त रस में प्रसाद गुण। काव्य के आवश्यक तत्त्व हैं।

गुणों के प्रकार

प्रयोग के आधार पर गुण तीन प्रकार के होते हैं : (1) माधुर्य गुण (2) ओज गुण (3) प्रसाद गुण

(1) माधुर्य गुण :

माधुर्य गुण श्रृंगार, करुण और शान्त रसों में पाया जाता है। इस गुण में वर्ण शब्द आदि की कोमलता, मधुरता अपेक्षित है। विषय वस्तु की अभिव्यक्ति कोमल वर्णों, शब्दों और संगीतात्मक ढंग से की गई हो, जिसमें ट, ढ, ड, ढ़, ण आदि कठोर वर्णों का प्रयोग न हो; संधि और समास का प्रयोग सीमित हो, वहाँ माधुर्य गुण होता है। इस गुण के कारण ही काव्य हमें पढ़ने या सुनने में अच्छा लगता है। उसका भाव और अर्थ हमारे ह्रदय को स्पर्श करता है, और हमें आनंद विभोर कर देता है। जैसे;

निरखि सखी ये खंजन आए

फेरे उन मेरे रंजन ने इधर नयन मन भाए।

(2) ओज गुण :

ओजगुण का सम्बन्ध वीर रस से है, लेकिन रौद्र और बीभत्स में भी इसका प्रयोग होता है। इस गुण के कारण काव्य में उत्साह, ऊर्जा और स्फूर्ति का संचार होता है। वर्णन को प्रभावशाली बनाने के लिए इसमें कठोर वर्णों का प्रयोग होता है। सामासिक शब्दावली और संधियुक्त शब्द भी ओजगुण में वृद्धि करते हैं। जैसे ;

हिमाद्रि तुंग श्रृंग से, प्रबुद्ध शुद्ध भारती

स्वयं प्रभा समुज्ज्वला स्वतंत्रता पुकारती

अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ़ प्रतिज्ञ सोच लो,

प्रशस्थ पुंय पंथ है बढ़े चलो बढ़े चलो।

(3) प्रसाद गुण :

प्रसाद गुण काव्य का महत्त्वपूर्ण गुण है। यह गुण काव्य में पवित्रता, निर्मलता, स्वच्छता आदि से संबंधित है। काव्यार्थ सीधा श्रोता या पाठक के ह्रदय में उतर जाए और सह्रदय को निर्मल आनंद दे, वही प्रसाद गुण है। यह गुण किसी विशेष रस के लिए नहीं है, इसका प्रयोग सभी रसों में, सभी स्थानों पर, सभी रचनाओं में आवश्यकतानुसार होता है। जैसे;

हे प्रभो! आनंददाता ज्ञान हमको दीजिए।
शीघ्र सारे दुर्गुणों को दूर हमसे कीजिए॥

काव्य दोष :

काव्यार्थ ग्रहण में रसास्वादन में जब बाधा उत्पन्न होती है; अर्थ को समझने में कठिनाई होती है; ऐसी स्थिति में काव्य-दोष होता है। काव्य दोष के कारण काव्य सह्रदय तक पहुँच नहीं पाता, और अर्थ प्राप्ति में बाधा पड़ती है। काव्य दोष के मुख्य चार प्रकार हैं; शब्दगत, रसगत, अर्थगत और पदगत।

(1) **शब्दगत दोष :** इसमें शब्द संबंधी दोषों का समावेश होता है। जिसमें सबसे प्रमुख है-श्रुतिकटुत्व।

श्रुतिकटुत्व : ऐसे शब्दों का प्रयोग जो सुनने में मधुर न लगे, अर्थात् कानों को कटु लगे उन्हें श्रुतिकटु या कर्णकटु कहा जाता है; ऐसे शब्दों से युक्त काव्य में श्रुतिकटुत्व दोष होता है।

(1) **अर्थगत दोष :** जहाँ अर्थ की प्राप्ति में बाधा हो वहाँ अर्थगत दोष होता है। इसका सबसे प्रमुख भेद है - क्लिष्टत्व।

क्लिष्टत्व : जहाँ अर्थ का बोध कठिनाई से हो रहा हो, वहाँ यह दोष होता है। रीतिकालीन और छायावादी कविताओं में तथा सूर आदि के कूट पदों में यह दोष बहुत मिलता है; अन्य अर्थ-दोषों में संदिग्ध, अव्याहत, अनावश्यक प्रयोग दोष, अपयुक्त दोष आदि मुख्य हैं।

(3) रस दोष : जहाँ उपयुक्त रस के सभी अंगों की ठीक-ठीक योजना न हो और रस-निष्पत्ति में बाधा उत्पन्न हो, वहाँ रस-दोष होता है। इसके कई भेदों में सर्व प्रमुख दोष है -

स्वशब्द वाच्य दोष : जब किसी रस के भाव या विभावादि की उपयुक्त योजना न करके कवि उस रस का या उसके अंगों का कथन मात्र कर देता है तब वहाँ स्वशब्दवाच्य दोष होता है; जैसे-

''मुख सूखहिं लोचन श्रवहिं शोक न हृदय समाय।
मनहुँ करुण रस कमल लै उतरा अवध बजाय।''

यहाँ करुण रस और उसके स्थायी भाव शोक का वर्णन कथन में किया गया है, परन्तु करुण रस के अंगों की सम्यक योजना करके रस-निष्पत्ति नहीं की गई है, इसलिए यहाँ स्वशब्दवाच्य दोष है।

अन्य रस-दोषों से विभाव और अनुभाव की कष्ट कल्पना, रस की पुनः पुनः दीप्ति, अकांड छेदन आदि हैं।

(4) वर्णन-दोष : जहाँ काव्य में किए गए वर्णन में कई प्रकार के दोष होते हैं; जैसे- पूर्वापर विरोध-एक बात जो पहले कही जाए और बाद में उसी का खंडन किया जाए। यह दोष अधिकतर प्रबंध काव्यों में होता है। प्रकृति-विरोध, अर्थ-विरोध, स्वभाव-विरोध आदि इसके अन्य प्रकार हैं; जैसे-

''फाड़-फाड़कर कुम्भस्थल, मदमस्त गजों का मर्दन कर,
दौड़ा सिमटा जमा उड़ा पहुँचा दुश्मन की गर्दन पर''

इन पंक्तियों में एक अश्व का वर्णन है किन्तु यह वर्णन अश्व के स्वभावगत गुणों के विरोध में है; अतः यहाँ स्वभाव विरोध वर्णन दोष है।

•

पूरक वाचन

1 जुदाई गुजरात की

वली

(जन्म : सन् 1648 ई; निधन : सन् 1744 ई.)

वली का जन्म औरंगाबाद में हुआ था। उनका संबंध अपने समय के प्रसिद्ध सूफ़ी विद्वान शाह वजीहुद्दीन अल्वी के खानदान से रहा है। उन्हें वली दकनी, वली औरंगाबादी और वली गुजराती जैसे तीन नामों से पुकारा जाता रहा है। सच यह है कि पुराने जमाने में गुजरात सहित पूरे दक्षिण भारत को 'दकन' कहा जाता था और गुजरात के प्रति कवि के बेहद लगाव को ध्यान में रख उनका वली गुजराती होना ही निश्चित माना जाता है।

वली को सचमुच गुजरात से बहुत लगाव था। वे कहा करते थे- गुजरात से उनका नाम ऐसे जुड़ा है जैसे गोश्त से नाखून। उन्हें गुजरात के सांप्रदायिक सौहार्य के वातावरण पर बड़ा नाज़ था। उन्होंने गुजरात के शहर सूरत पर एक सुंदर मस्नवी लिखी और गुजरात से बाहर जाने पर इसकी याद में 'दर फ़िराक-ए-गुजरात' शीर्षक से क़त्आ लिखा था। असल में वली के गुजरात से लगाव का कारण यह था कि उनके गुरु शादुल्लाखाँ गुलशन का अहमदाबाद से ताल्लुक था। गुजरात से गए हुए कई सूफ़ी शायर दकन में उनके मित्र थे। सूरत, अहमदाबाद वली के जमाने में गूजरी (खड़ीबोली) शायरी के बहुत बड़े केन्द्र थे और यहाँ भी उनके मित्र थे। दकन से दिल्ली जाते समय और दिल्ली से दकन जाते समय वे गुजरात में बहुत दिन ठहरे और उनकी अहमदाबाद में मृत्यु हुई थी और यहीं वे दफनाए गए। गुजरात से लगाव और जुदाई की बेमिसाल कविता हैदर-फ़िराक-ए-गुजरात, जिसमें गुजरात से जुदाई का बड़े मार्मिक ढंग से बयान है। उन्हें सबसे ज्यादा दु:ख और अफसोस अपने मित्रों की मृत्यु का है, फिर भी उन्हें गुजरात से इतना गहरा लगाव है कि वे बार-बार गुजरात को देखने की ख्वाहिश रखते हैं।

गुजरात के फ़िराक़ सूँ है ख़ार-ख़ार दिल
बेताब है सिने मिनी आतिश बहार दिल
मरहम नहीं है उसके ज़ख़म का जहाँ मिनीं
शमशीर-ए-हिज्र सूँ जो हुआ है फ़िगारे दिल
अव्वल सूँ था ज़ाईफ़ पे पाबस्ता सोज़ में
ज्यूँ बाल है अगन के उपर बेक़रार दिल
इस सैर के नशे सूँ अवल तर दिमाग़ था
आख़िर कूँ इस फ़िराक़ ने खींचा ख़ुमार-दिल
मेरे सिने में आके चमन देख इश्क का
है जोश-ए-ख़ूँ सूँ तन में मिरे लाला ज़ार दिल
हासिल किया हूँ जग में सरापा शिकस्तगी
देखा है मुझ शकेब सूँ सुब्ह-ए-बहार दिल
हिज़ात सूँ दोस्ताँ के हुआ दिल मिरा गुदाज़
इशरत के पैरहन कूँ किया तार-तार दिल
हर आशना की याद की गर्मी सूँ तन मिनीं
हर दम में बेक़रार है मिस्ल-ए-शरार दिल
सब आशिक़ाँ हुजूर, अछे पाक सुर्ख़ रू
अपना अपस लहूँ सूँ किया है निगार दिल
हासिल हुआ है मुजकूँ समर मुझ शिकस्त सूँ
पाया है चाक-चाक हो शक्ल-ए-अनार दिल
मिज्मर निमन हुआ है बदन सोज़-ए-हिज्र सूँ

इस्पद का मिसाल है आतिश-सवार दिल
अफ़सोस है तमाम कि आख़िर कूँ दोस्ताँ
इस मैकदे सूँ उठ के गए सुध बिसार दिल
लेकिन हज़ार शुक्र 'वली' हक के फ़ैज़ सूँ
फिर उसके देखने का है उम्मीदवार दिल

शब्दार्थ-टिप्पणी

फ़िराक जुदाई,वियोग **खार** काँटा **सीनेमिनी** दिल में **आतिश** आग **जखम** घाव **जहाँ मिनी** संसार में **शमशीर-ए-हिज्र** जुदाई की तलवार **फिगार** घायल **जईफ** कमजोर **पाबस्ता** बँधे हुए पाँव **सोज़** ऊष्मा,ताप **अगन** आग **बाल** पूरा हाथ **बेकरार** बेचैन **अवल** सबसे आगे **तर** भीगा हुआ **खुमार** नशा **चमन** बगीचा **जोश-ए-खूँ** खून का उफान **जार दिल** दिल का फूट फूट कर रोना **सरापा** सिर से पाँव तक **शिकस्तगी** हार, पराजय **शकेब** सब्र **सुब्ह-ए-बहार** मौसम की सुबह **गुदाज** मांसल,गदराया हुआ **इशरत** चैन,आनंद **पैरहन** लंबा पहनान **आशना** दोस्त **मिस्ल-ए-शरार** चिनगारी की तरह **अछे** है **पाक** पवित्र **सुर्खरु** लाल **निगार** मूर्ति,चित्र **मुजकूँ** मुझे **समर** फल **चाक-चाक** तार-तार **शक्ल-ए-अनार** अनार की तरह **मिज्मर निमन** अंगीठी जैसा **बदन** शरीर **सोज-ए-हिज्र** वियोग केताप से **इस्पद** नजर उतार ने के लिए जलाया जानेवाला एक प्रकार का काला बीज **मिसाल** उदाहरण **आतिश सवार** आग पर सवार **मैकदे सूँ** मदिरालय से **बिसार** भुलाकर **शुक्र** धन्यवाद **हक के फैर्ज सूँ** भलाई की मंशा से **उम्मीदवार** आस लगाए हुए

•

2 गाँधीजी को एक चिट्ठी

जयप्रकाश नारायण

(जन्म: सन् 1902 ई.; निधन सन् 1979ई.)

स्वतंत्रा संग्राम के बहादुर सेनापति एवं संपूर्ण क्रांति के दृष्टा लोकनायक जयप्रकाश नारायण का जन्म गंगा-सरयू संगम के निकट दो नदियों के बीच दोआब पर सिताब्दिआरा गाँव में हुआ था। माध्यमिक शिक्षा पटना में प्राप्त की। गाँधीजी के चंपारण सत्याग्रह के दौरान पढ़ाई छोड़कर बिहार विद्यापीठ में राष्ट्रीय शिक्षा पाने के लिए जुड़ गए। बीस साल की आयु में सेन्फ्रांसिस्को गए और सात वर्ष तक वहाँ रहकर बहुत कुछ सीखा। मार्क्सवाद से भी प्रभावित हुए। स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़े और कईबार जेल गए। गाँधीजी, नहेरूजी के अतिरिक्त डॉ. राममनोहर लोहिया के संपर्क में आए। 1942 के 'भारत छोड़ो आंदालन' ने उन्हें बहुत लोकप्रिय बना दिया। विनोबाजी के भूदान यज्ञ के प्रचारार्थ पूरे देश की पद-यात्रा की।

गुजरात के नवनिर्माण आंदोलन का सफल नेतृत्व करते हुए उन्होंने संपूर्ण क्रांति का नारा दिया और इन्हीं दिनों लोकनायक का बिरूद प्राप्त हुआ। आपात्काल के दौरान उन्हें जेल जाना पड़ा जेल से मुक्त होने के बाद उन्होंने जनता पार्टी से जुड़कर आपात्काल थोपने वाली शक्तियों को पराजित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। बिहार में उन्होंने एक नई चेतना जगाई। राष्ट्रीयता उनकी सबसे बड़ी पहचान थी। 1998 में मरणोप्रांत उन्हें 'भारतरत्न' का सम्मान दिया गया। राजसत्ता से नहीं जन-हृदय से जुड़कर ही वे सच्चे लोकनायक बन सके थे।

कारावास के दौरान गाँधीजी के नाम लिखी चिट्ठी में जयप्रकाशजी ने उनके प्रति अपना आदरभाव व्यक्त किया है। साथ ही कुछ मौलिक सिद्धांतों को लेकर उनसे अपने मतभेदों की ओर भी विनम्रतापूर्वक संकेत करते हैं। वे लिखते हैं कि स्वतंत्रता संग्राम के संदर्भ में कारावास यातनापूर्ण होते हुए भी एक अनिवार्य स्थिति है। आंदोलन में नवयुवकों का जुड़ना आशा की नई किरण है अत: उनके भविष्य के बारे में सोचना भी आवश्यक है। अपनी चिट्ठी में सरदार साहब का स्मरण करना वे नहीं भूलते।

प्रिय बापू जी,

चरणों में सादर सप्रेम प्रणाम!

प्रभा के हाथों आपका जो कृपा-पत्र आया था, वह उसी समय मिल चुका था। खेद है कि अब तक उत्तर नहीं दे पाया था, क्षमा प्रार्थी हूँ।

मैंने प्रभा से सिर्फ इतना ही कहा था कि आपसे पूछ लें कि जो पत्र लाहौर से सेवा में भेजा था, वह मिला था या नहीं। मुझे दु:ख है कि उसने आपको पत्र लिखने का कष्ट दिया। फिर भी कृपापत्र पाकर धन्य हुआ हूँ।

यह सही है कि कुछ विचार-क्षेत्रों में मैं खिंचकर आपके बहुत निकट आ गया हूँ, जिससे मुझे प्रसन्नता ही मिलती है। परन्तु साथ ही इस बात का दु:ख बना हुआ है कि मौलिक सिद्धान्तों के क्षेत्रों में आज भी अपने को आपसे उतनी ही दूर पाता हूँ, जितना कभी भी था और कार्य क्षेत्र से तो मुझे ऐसा लगता है कि मेरा क्षेत्र दूर ही नहीं, बल्कि नितान्त पृथक भी हो जाएगा। इधर प्राय: जितनी घटनाएँ हुई हैं, उनका कारण तो मैं इस धारा में अपने को अधिकाधिक बेगवान ही हुआ पाता हूँ। अस्तु, जैसा आपने लिखा है, जेल की और बाहर जगत की भावनाओं में अक्सर अन्तर पाया जाता है।

यों तो जेल मनुष्य का रहने का स्थान नहीं है, फिर भी मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं न अपनी रिहाई के दिन ही गिन रहा हूँ कि यही सोचता हूँ कि कोई महायज्ञ कर रहा हूँ।

क्रान्तियों में कुछ का मरना, कुछ का बरबाद हो जाना, कुछ का कारीगरों में सड़ते रहना अनिवार्य है। इसमें किसी प्रकार के सोच-विचार का स्थान ही कहाँ है? अभी हजारों जेल में पड़े हैं - आगे भी हजारों पड़ेंगे।

अब हमारे बाग के बरसाती फूलों के म्लान मुख पर बुढ़ापे की झुरियाँ पड़ चुकी हैं। उनको जगह लेने के लिए शीत ऋतु के फूलों के अंकुर मिट्टी के आंचल में झाँक रहे हैं। और, आजकल मेरा अधिक समय उन्हीं के भविष्य के निर्माण में बीत रहा है और इस कल्पना में की मेरी इस-छोटी दुनिया के किस कोने को कौन-सा फूल आलोकित करेगा और किस क्यारी को अपनी मुस्कान से ढ़क लेगा।

परिस्थिति इस बात का विश्वास दिला रही है कि अपनी कल्पनाओं का मूर्त रूप अवश्य देखने को मिलेगा। और, इससे प्रसन्नता का ही अनुभव करता हूँ; क्योंकि अपने परिश्रम का निष्फल जाना साधारणत: मनुष्य सह्य नहीं होता।

आशा है, इस बकवास से कुछ मनोरंजन ही हुआ होगा। फिर भी पत्र की लम्बाई के लिए क्षमा चाहता था। पत्रोत्तर देने का कष्ट न करें, तो ही मुझे संतोष होगा।

बम्बई में ज्वर हो जाने का समाचार पढ़कर दु:खी हुआ था। आशा है, अब स्वास्थ्य ठीक होगा। सरदार साहब के चरणों में मेरा प्रणाम। समाचार पत्रों से यह जानकर खुशी हुई है कि उनके स्वास्थ्य में सुधार हो रहा है। आशा है, सीघ्र ही पूर्ण स्वास्थ्य लाभ कर सकेंगे।

प्रभा पिछले मास के 15, 16 को आई थी। फिर इस महीने के अन्त में उसके आने की आशा है।

आपका
जयप्रकाश नारायण

शब्दार्थ-टिप्पणी

क्षमा प्रार्थी माफ़ी माँगने वाला **कृपापत्र** बड़ों का छोटो को लिखा जानेवाला पत्र **मौलिक** असली, जो किसी की नकल पर न हो बल्कि अपनी उभ्दावना से निकला हो **नितान्त पृथक** एकदम अलग **बेगवान** तेज गति वाला **म्लान** मुरझाया **आलोकित** प्रकाशित **सह्य** सहन करने योग्य **पत्रोत्तर** पत्र का उत्तर **ज्वर** बुखार

•

3 पुस्तकें

विश्वनाथप्रसाद तिवारी

(जन्म: सन् 1940 ई.)

विश्वनाथ तिवारी का जन्म उत्तरप्रदेश के कुशीनगर के रायपुर भेड़िहारी गाँव में हुआ था। उच्च सिक्षा प्राप्त कर गोरखपुर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में प्राध्यापक रहे। कई बार कई देशों की यात्राओं ने उनके अनुभव-विश्व को समृद्ध किया। 'दस्तावेज' जैसी महत्त्वपूर्ण हिन्दी पत्रिका के सफल संपादन के लिए उन्हें 'सरस्वती, सम्मान मिला। कविता, संस्मरण, आलोचना और यात्रा-संस्मरण के साथ-साथ पत्रकारिता जैसी कई विधाओं में उनका विशेष योगदान है।

उनके मुख्य काव्य-संग्रह हैं 'आखर अनंत', 'चीजों को देख कर', 'बेहतर दुनिया के लिए', 'शब्द और शताब्दी'। आलोचना-ग्रंथ हैं- 'आधुनिक हिन्दी कविता', 'समकालीन हिन्दी कविता', 'रचना के सरोकार', 'कविता क्या है', और 'गद्य के प्रतिमान।' उनके संस्मरणों में 'आत्मकी धरती', 'अंतहीन आकाश', 'एक नाव के यात्री' प्रमुख हैं। 'फिर भी कुछ रह जाएगा' के लिए व्यास सम्मान, उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान से 'साहित्य भूषण' सम्मान एवं मोस्को का पुश्किन सम्मान प्राप्त हुआ। समकालीन कविता में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान है।

प्रस्तुत कविता में कवि ने एक ओर पुस्तकों के प्रति समाज की अनदेखी और उपेक्षा के प्रति अपनी चिंता प्रकट की है तो दूसरी ओर आनेवाले भविष्य के लिए उनकी अनिवार्यता एवं बहुमूल्यता का स्वीकार किया है। पुस्तकों को यदि कहीं भी- किसी भी अंध गह्वर में छिपा दिया गया होगा तो भी उन्हें खोजता-टटोलता कोई जिज्ञासू अवश्य आ टकराएगा। कवि पुस्तक से निवेदन करता है कि तुम उस जिज्ञासू को स्पर्श-मात्र से ही पहचान लेना और अपने अंतर में सहेजा हुआ सब कुछ उसके सामने खोलकर रख देना। कवि के विचार से पुस्तकें ही हमारे साहित्य और संस्कृति की सच्ची संरक्षिका हैं।

नहीं, इस कमरे में नहीं
उधर
उस सीढ़ी के नीचे
उस गैरेज के कोने में ले जाओ
पुस्तकें
वहाँ, जहाँ नहीं अँट सकती फ्रिज
जहाँ नहीं लग सकता आदमकद शीशा

बोरी में बाँधकर
चट्टी से ढककर
कुछ तख्ते के नीचे
कुछ फूटे गमले के ऊपर
रख दो पुस्तकें

ले जाओ इन्हें तक्षशिला-विक्रमशिला
या चाहे जहाँ
हमें उत्तराधिकार में नहीं चाहिए पुस्तकें
कोई झपटेगा पासबुक पर
कोई ढूँढ़ेगा लॉकर की चाभी
किसी की आँखों में चमकेंगे खेत

किसी में गड़े हुए सिक्के
हाय-हाय, समय
बूढ़ी-दादी सी उदास हो जाएँगी
पुस्तकें
पुस्तको!
जहाँ भी रख दें वे
पड़ी रहना इंतजार में

आएगा कोई न कोई
दिग्भ्रमित बालक जरूर
किसी शताब्दी में
अँधेरे में टटोलता अपनी राह

स्पर्श से पहचान लेना उसे
आहिस्ते-आहिस्ते खोलना अपना हृदय
जिसमें सोया है अनंत समय
और थका हुआ सत्य
दबा हुआ गुस्सा
और गूँगा प्यार
दुश्मनों के जासूस
पकड़ नहीं सके जिसे।

शब्दार्थ-टिप्पणी

अँटना समाना **आदमकद** मनुष्य की लंबाई जितना **बोरी** जूट का बना बड़ा थैला **चट्टी** चटाई **दिग्भ्रमित** दिशाहीन **आहिस्ता-आहिस्ता** धीरे-धीरे

•

4 रसायन और हमारा पर्यावरण

डॉ. एन. एल. रामनाथन
(जन्मः सन् 1927 ई.)

डॉ. रामनाथन का जन्म केरल में हुआ था। कोचीन से आरंभिक शिक्षा प्राप्त कर इन्होंने काशी विश्वविद्यालय से भौतिक में एम. एस. सी. की उपाधि प्राप्त की। बंगलौर तथा कलकत्ता में रहते हुए इन्होंने भौतिक और पर्यावरण के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण शोध कार्य किया। जादवपुर विश्व विद्यालय से इन्हें पी. एच. डी. की उपाधि प्रदान की गई। पर्यावरण की सुरक्षा को लेकर इन्होंने गम्भीरता पूर्वक विचार किया है।

प्रस्तुत निबंध में लेखक ने रासायनिक पदार्थों से होने वाले पर्यावरण-प्रदूषण एवं उनके घातक प्रभावों पर प्रकाश डाला है। वस्तुतः आजका युग रसायनों का ही युग है। पृथ्वी पर जल, जीव-जंतुओं का अस्तित्व रसायनों के कारण ही है। हमारा जीवन सामान्य रूप से भी अनेक छोटे-बड़े खतरों से भरा है। रसायन भी हमारे जीवन के लिए कई प्रकार के खतरे पैदा करते हैं। हमारे स्वास्थ्य के लिए अनेक चुनौतियाँ पैदा करते हैं। डी.डी.टी, मरकरी सेल, सीसा, सल्फर डाइऑक्साइड आदि ऐसे अनेक तत्त्व हैं। ऐसे रसायनों के बारे में हमें जानकारी होनी चाहिए। इनसे होनेवाले लाभ तथा हानियों के प्रति हमारी सतर्कता-सजागता का होना बहुत जरूरी है। इनका प्रत्यक्ष या परोक्ष उपयोग करते समय हमें विवेकपूर्वक विचार करना चाहिए। इस विषय में हमें अपनी ही नहीं, आनेवाली पीढ़ियों की भी चिंता करनी होगी।

हम रसायनों के युग में रह रहे हैं। हमारे पर्यावरण की सारी वस्तुएँ और हम सब, रासायनिक यौगिकों के बने हुए हैं। हवा, मिट्टी, पानी, खाना, वनस्पति और जीव-जंतु ये सब अजूबे जीवन की रासायनिक सच्चाई ने पैदा किए हैं। प्रकृति में सैंकड़ों-हजारों रासायनिक पदार्थ हैं। रसायन न होते तो धरती पर जीवन भी नहीं होता। पानी, जो जीवन का आधार है, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन से बना एक रासायनिक यौगिक है। मधुर-मीठी चीनी, कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन से बनी है। कोयला और तेल, बीमारियों से मुक्ति दिलाने वाली औषधियाँ, एंटीबायोटिक्स, एस्प्रीन और पेनिसिलीन, अनाज, सब्जियाँ, फल और मेवे-सभी तो रसायन हैं।

जीवन जोखिम से भरा है, गुफा-मानव ने जब भी आग जलाई, उसने जल जाने का खतरा उठाया। जीवनयापन के आधुनिक तरीकों ने कुछ खतरों को कम किया है, पर कुछ खतरे अनेक गुना बढ़ गए हैं। ये खतरे नुकसान और शारीरिक चोट के रूप में हैं। हम सभी अपने दैनिक जीवन में जोखिम उठाते हैं। जैसे जब हम सड़क पार करते हैं, स्टोब जलाते हैं, कार में बैठते हैं, खेलते हैं, पालतू जानवरों को दुलारते हैं, घरेलू काम-काज करते हैं, या केवल पेड़ के नीचे बैठते होते हैं, तो हम जोखिम उठा रहे होते हैं। इन जोखिम में से कुछ तात्कालिक हैं, जैसे जलने का, गिरने का या अपने ऊपर कुछ गिर जाने का खतरा। कुछ खतरे ऐसे हैं जिनके प्रभाव लम्बे समय के बाद सामने आते हैं जैसे लम्बे समय तक शोर-गुल वाले पर्यावरण में रहने वाले व्यक्तियों की श्रवण शक्ति कम हो सकती है।

क्या रसायन भी जोखिम उत्पन्न करते हैं ? स्पष्ट है कि कुछ अवश्य करते हैं। उनमें से अनेक बहुत अधिक जहरीले हैं, कुछ प्रचंड विस्फोट करते हैं और कुछ अन्य अचानक आग पकड़ लेते हैं, ये रसायनों के कुछ तात्कालिक 'उग्र' खतरे हैं। रसायनों में कुछ दीर्घकालिक खतरे भी होते हैं, क्योंकि कुछ रसायनों के सम्पर्क में अधिक समय तक रहने पर, चाहे उन रसायनों का स्तर लेशमात्र ही क्यों न हो, शरीर में बीमारियाँ पैदा हो सकती हैं।

वास्तव में रसायनों के बारे में यह कहना शायद गलत न हो कि जो रसायन जितना अधिक जहरीला या खतरनाक होता है, उसका उपयोग आज उतना ही सुरक्षित है, क्योंकि लोग उसके बारे में पहले से सावधान होते हैं और इसलिए इन्हें इस्तेमाल करते वक्त कापी सतर्क रहते हैं।

लेकिन अपेक्षाकृत कम जहरीले रसायनों के बारे में यह बात नहीं कही जा सकती है। रसायनों के लम्बे समय के बाद उजागर होने वाले प्रभाव, दीर्घकालिक खतरे, अभी हाल ही में पहचानी गई समस्या है, कुछ रसायन उस पीढ़ी को तो प्रभावित नहीं करते जो उसके सम्पर्क में रहती है, पर उनके प्रभाव अगली या उससे भी अगली पीढ़ी को झेलने पड़ते हैं। ऐस्बेस्टस ने, जिसे हमने एक सुरक्षित पदार्थ समझा था और जो अग्नि को भी सह सकता है, अपने कैंसर पैदा करने के अवगुण से हमें आश्चर्य में डाल दिया। पोलीक्लोरीनेटिड बाइफेनिल, जो अपने परावैद्युत (डाई-इलेक्ट्रक) गुण के कारण जाने जाते हैं, वातावरण में धीरे-धीरे इकट्ठे होते जाते हैं, और एक लम्बे समय के बाद जीवों, मछलियों और यहाँ तक कि मनुष्यों के लिए भी खतरा उत्पन्न कर देते हैं। एक अन्य गजब के रसायन, डी.डी.टी. को तब खतरनाक करार दिया गया जब रचैल कार्सन ने अपनी पुस्तक 'लाइलेंट स्प्रिंग' में इसके अवगुण बखाने। कास्टिक सोड़ा के उत्पादन में काम आने वाली मरकरी सेल प्रौद्योगिकी दो दशक पहले तब तक बड़े मजे से इस्तमाल की जाती रही, जब तक कि विश्व के सामने जापान में मिनामाटा की मछली खाने वाली आबादी में, अपंग बना देने वाला और आमतौर पर घातक सिद्ध होनेवाला स्नायु रोग फैलने की घटना सामने नहीं आई। यह रोग पानी में बहि:स्राव के रूप में बहाए जाने वाले मरकरी के कारण फैल रहा था। इसका मेथिल मरकरी में जैविक परिवर्तन हो रहा था और मछलियाँ उसे मनुष्य में पहुँचा रही थीं।

हमारा आधुनिक औद्योगिक अनुभव, प्रतिदिन इस्तेमाल होने वाले रसायनों के दीर्घकालिक खतरों से भरा पड़ा है, इन रसायनों में भारी धातुएँ, कार्बनिक विलायक, जहरीली बाष्प और गैसीय उत्सर्जक शामिल हैं। इनमें से अनेक प्रदूषकों को हम भोजन और पानी के साथ अपने पेट में अथवा साँस के साथ अपने फेफड़ों में ले जाते हैं। दुर्भाग्य से वायु प्रदूषण तक घरेलू शब्द बन गया है। कुछ ऐसे रसायन भी मौजूद हैं जो हमारी सही सलामत खाल से होते हुए हमारे शरीर में प्रवेश कर जाते हैं।

सीसा यानी लेड एक सर्वव्यापी विष है। सल्फर डाइऑक्साइड सब जगह पाई जाती है। हमारे लगभग सभी खाद्य पदार्थों में कीटनाशक दवाइयों के अवशेष पहुँच चुके हैं। इनमें से अधिकतर रसायनों के जहरीलेपन के बारे में हमें जानकारी है, पर फिर भी उनसे जुड़े खतरों के बारे में वैज्ञानकों की अलग-अलग राय है, पर इस बात से सभी सहमत हैं कि रसायनों के सम्पर्क में रह कर काम करने वाले कर्मचारियों को उनसे सुरक्षा प्रदान करने और आम जनता तथा पर्यावरण को निम्न स्तरीय प्रदूषण से बचाने के लिए कदम उठाये जाने चाहिए। रासायनिक उत्पादों से निश्चित सुरक्षा पाने और पर्यावरण को प्रदूषित होने से बचाने के लिए हमें और अधिक जानकारी हासिल करने की जरूरत है।

सबसे पहले यह जरूरी है कि खतरों को पहचाना जाए। इसके बाद हमें अपने विज्ञान और प्रौद्योगिकी के वर्तमान ज्ञान के आधार पर उन्हें निम्नतम स्तर पर काम करना चाहिए, किन्तु ज्ञान का कितना भी ऊँचा स्तर अथवा सरकारी कानून इन जोखिमों को पूरी तरह दूर नहीं कर सकते। क्यों कोई दुनिया की उस स्थिति की कल्पना कर सकता है जिसमें सभी संभाव्य खतरनाक रसायनों पर प्रतिबन्ध लगा दिया हो ? ऐसा कुछ भी तो नहीं है जिससे हानि हो सकने की संभावना न हो। एक पुरानी कहावत है जिसका आशय है "अति से तो अमृत भी जहर बन जाता है।"

हमें जोखिमों पर अपने निर्णय की संभाव्यता के आधार पर जोखिम-लाभ विश्लेषण की संकल्पना को ध्यान में रखकर लेने होंगे। यह कोई ऐसा मामला नहीं है जिसमें काले को विशुद्ध काला और सफेद बतलाया जा सके अथवा स्पष्ट 'हाँ' या ''ना' कहा जा सके। यह किया कैसे जाए ? और क्या यह किया जाना आवश्यक है भी ? इस बारे में लोगों की रायों में बहुत अन्तर होता है। इसलिए 'ग्राह्य जोखिम' और 'अग्राह्य जोखिम' शब्दों का इस्तेमाल होने लगा है।

खेती में इस्तेमाल होने वाले कीटनाशी मनुष्य के लिए किसी न किसी हद तक जहरीले हैं, इन्हें पर्यावरण में जानबूझ कर छिड़का जाता है, किन्तु इसके लिए इन्हें भली–भाँति परखा जाता है और इस्तेमाल की अनुमति दी जाती है। कारण, इससे फसल की वृद्धि के रूप में अधिक लाभ प्राप्त होता है। रासायनिक कीटनाशियों के इस तरह नियंत्रित इस्तेमाल के खतरे ग्राह्य जोखिम हैं, लेकिन जोखिम का मूल्यांकन समय अथवा परिस्थितियों के साथ बदल सकता है। विकसित देशों में सन् 1972 ई. के बाद डी.डी.टी. पर प्रतिबन्ध लगा दिया था, किन्तु विकासशील देश डी.डी.टी. के लगातार इस्तेमाल में आज भी लाभ देख रहे हैं।

कुछ रसायन जो अपने आप में सुरक्षित हैं, इस समय हानि पहुँचाते हैं जब वे अन्य पदार्थों से क्रिया कर लेते हैं या फिर जब वे अन्य पदार्थों के साथ मिलने के बाद अपना जहरीलापन छोड़ देते हैं। सोडियम और क्लोरिन दोनों खतरनाक हैं, किन्तु साधारण नमक, सोडियम क्लोराइड जीवन के लिए जरूरी है। दूसरी ओर समुद्र का पानी पीने की दृष्टि से अत्यन्त जहरीला है और लम्बे समय तक नमक का सेवन रक्तचाप बढ़ने का कारण बन जाता है, जो एक दीर्घकालिक जोखिम है। यहाँ पर, मात्रा और जहरीलापन–दोनों तथ्य जोखिम के अर्थ को प्रभावित करते हैं।

कैंसर सबसे भयानक रोग है। कहा जाता है कि कैंसर अधिकतर पर्यावरणीय रसायनों के प्रति अद्‌भासन के कारण होता है। यह तथ्य है या युँ ही उड़ाई गई बात? कैंसर से सम्बन्धित आँकड़े आज अविश्वसनीय हैं। ऐसी रिपोर्ट भी मौजूद है जो संकेत देती है कि कैंसर के मामले बढ़ रहे हैं, किन्तु अन्य रिपोर्टों के अनुसार कैंसर के मामले कम होते जा रहे हैं। जिछले 25 वर्षों में पेट के कैंसर मामलों में भी कमी आई है, किन्तु फेफड़ों का कैंसर बढ़ा है। आमतौर पर यह बताया गया है कि कैंसर के 80 प्रतिशत मामले पर्यावरणीय कारकों से संबन्धित हैं। इसका अर्थ यह लगा लिया जाता है कि सारा दोष संश्लेषित रसायनों और वायु प्रदूषण का है। तथ्य जबकि यह है कि ये आँकड़े केवल अर्थ अनुमान आधारित हैं, उनमें उन सभी कैंसरों के मामलों को भी गिना जाता है जो आनुवांशिक नहीं हैं। पर्यावरण कारकों में तम्बाकू, शराब, सूरज की रोशनी और स्वच्छता भी शामिल है और प्रदूषण भी। प्रत्यक्ष रूप से कामकाज के वातावरण के कारण उत्पन्न कैंसर, कुल कैंसरों के मामलों का एक से पाँच प्रतिशत है।

रसायनों के बारे में, समाज के प्रति उसके लाभों और खतरों के बारे में निर्णय कौन करे? इस सम्बन्ध में व्यक्तिगत और सामाजिक दृष्टिकोण है जो आदमी सिगरेट पीता है या शराब का सेवन करता है और अपनी सेहत के प्रति लापरवाह है, जोखिमों के सम्बन्ध में यह अपना ही निर्णय ले रहा है। दूसरी ओर, सामाजिक निर्णय सरकार को लेने होते हैं। किन्तु सरकार विज्ञान से लेकर सामान्य बुद्धि तक, सभी उपलब्ध सूचनाओं का उपयोग करके यह निर्णय किस प्रकार ले? रसायनों के इस्तेमाल पर सरकारी निर्णय, कानून और नियम बढ़ते जा रहे हैं क्योंकि जनता के स्वास्थ्य की सुरक्षा सरकार का कानूनी उत्तरदायित्व है।

रसायनों के सम्बन्ध में सूचनाओं का विश्लेषण आसान नहीं है। सभी प्रकार के लोगों का इस सूचना–भंडार में योगदान होता है। इनमें अक्सर असहमतियाँ होती हैं। मोटर–गाड़ियों की गति सीमा कितनी होनी चाहिए? कोई रसायन कारखाना, रोजगार, उत्पादन और सेवाएँ उपलब्ध करने के लिए बनाया जाना चाहिए या उसे इसलिए नहीं बनाया जाना चाहिए क्योंकि वह प्रदूषण फैलाता है? ये सब रोज के प्रश्न हैं। हमारे निर्णय पर भावनाएँ और आशंकाएँ हावी हो जाती हैं। सही वैज्ञानिक तथ्य अधिकतर मौजूद नहीं होते या पर्याप्त नहीं होते। रसायनों के जोखिम के प्रति निर्णय लेना कभी भी आसान नहीं है, किन्तु आवश्यक हमेशा है। जोखिमों और लाभों के बारे में निर्णय लेने वाले तो हम सब ही हैं।

रसायन हमारी आवश्यकता है। ये हमारे पर्यावरण में हमेशा मौजूद हैं, इनकी सूक्ष्म अथवा लेश मात्रा भी 'अर्थपूर्ण' हो सकती है। इन लेश रसायनों के बारे में हमें और अधिक जानने की जरूरत है। हमें इस बारे में भी और जानकारी हांसिल करनी है कि इनसे क्या हो सकता है। जब तक कोई रसायन बिना किसी संदिग्धता के गैर जरूरी और हानिकर सिद्ध न हो जाए, तब तक उसका इस्तेमाल जारी रहने देना चाहिए। लेकिन यह इस्तेमाल सुरक्षित ढंग से और सुरक्षित मात्रा में होना चाहिए। तात्पर्य यह

है कि संभावी लाभकारी पदार्थों का इस्तेमाल, उनके गलत इस्तेमाल से हो सकने वाली सभी हानियों को पूरी तरह जानते-समझते हुए, पूरे विवेक के साथ किया जाना चाहिए प्रश्न उठता है कि क्या हम ऐसा करने में सफल हो सकते हैं ? बहुत से मामलों में ऐसा किया जा चुका है और यदि हम कोशिश करें तो ऐसा अवश्य कर सकते हैं। इसमें शक नहीं, हमें लगातार सतर्क रहना होगा। रासायनिक सुरक्षा को प्रतिदिन का कार्य मान लिया जाना चाहिए।

शब्दार्थ-टिप्पणी

रसायन वह औषध जिसके सेवन से सब रोग हट जाते हैं,पदार्थों के तत्त्वों का ज्ञान **अजूबे** अद्भुत **उद्मासन** अच्छे से प्रकट होना **दीर्घकालिक** लम्बे समय तक

• • •